श्री अरविन्द कर्मधारा

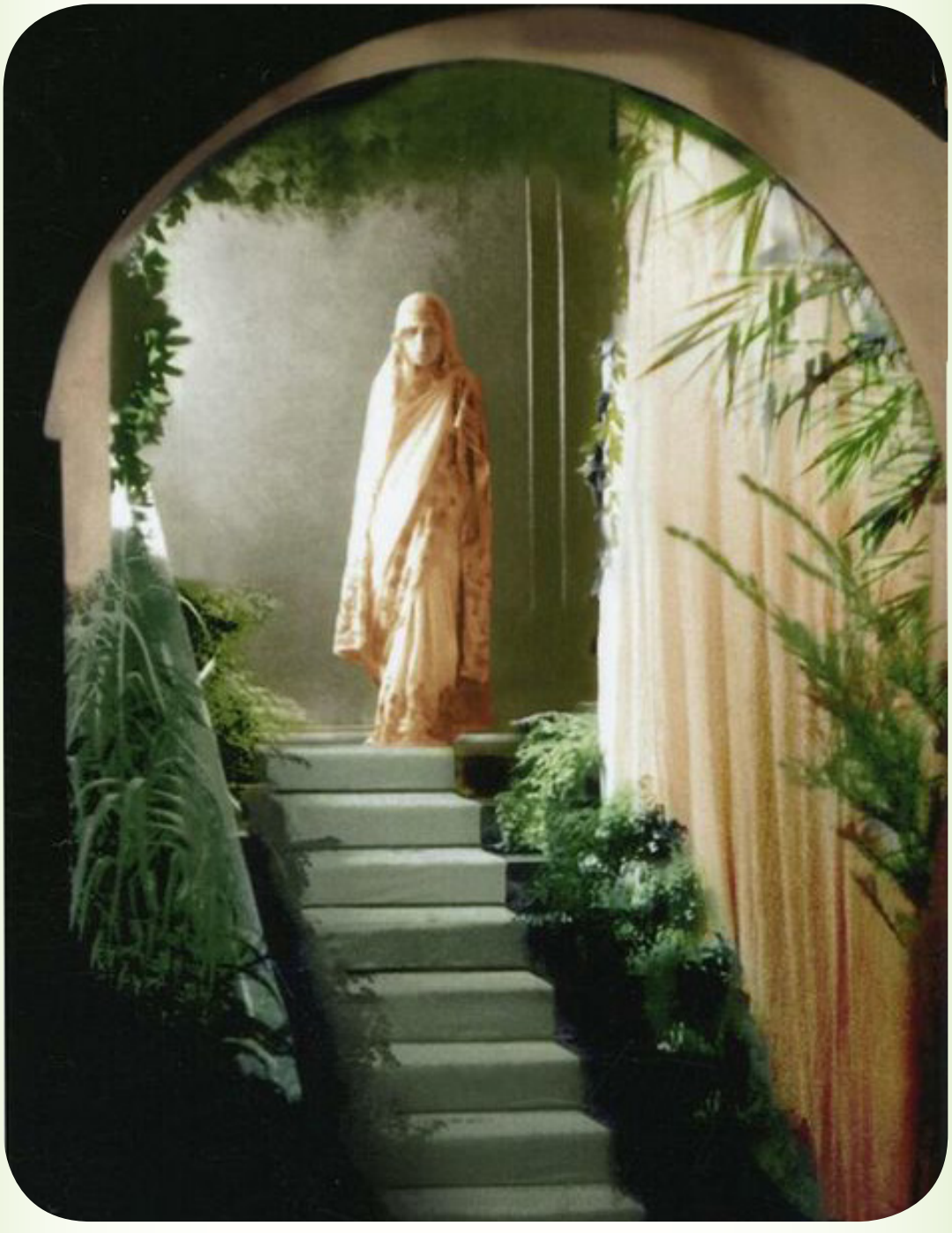

जो असीम को चुनता है उसे असीम ने चुन ही लिया है।

श्रीमाँ

24 अप्रैल 2018 वर्ष 48 अंक 2

24 फरवरी - दिल्ली आश्रम द्वारा श्री अरविन्द समाधि स्थल पर दीपांजलि

तपस्या की 27वीं वर्षगाँठ पर संध्या गज़ल कार्यक्रम

श्री अरविन्द कर्मधारा

श्री अरविन्द आश्रम-
दिल्ली शाखा का मुखपत्र

24 अप्रैल 2018-वर्ष-48-अंक-2

संस्थापक

श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर फकीर`

सम्पादक

त्रियुगी नारायण

सहसम्पादन

रूपा गुप्ता

विशेष परामर्श समिति

कु0 तारा जौहर, सुश्री रंगम्मा

ऑनलाइन पब्लिकेशन ऑफ श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा (नि:शुल्क उपलब्ध)

कार्यालय

श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली-शाखा
श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-110016
दूरभाषः 26524810, 26567863
आश्रम वैबसाइट
(www.sriaurobindoashram.net)

नि:शुल्क पत्रिका के लिये कृपया सब्सक्राइब करें-
sakarmdhara@gmail.com

श्रद्धा और ज्ञान

श्रद्धा ज्ञान से भिन्न है। श्रद्धा विषय को सामूहिक और सामान्य रूप से भांप लेती है, ज्ञान उसे साफ और अलग अलग जानता है। परन्तु प्रधानतः श्रद्धा और ज्ञान एक ही हैं और ऋषि की प्रज्ञा प्रेमी की प्रज्ञा को उचित ठहराती है तथा उसका समर्थन करती है। श्रद्धा ईश्वर के लिये तब भी लड़ती है जब ज्ञान अभी पूरी जानकारी के लिये प्रतीक्षा कर रहा होता है, और जब तक ज्ञान अप्राप्त रहता है तब तक श्रद्धा की आवश्यकता रहती ही है क्यों कि अदम्य श्रद्धा और अन्तःस्फूर्त प्रज्ञा के बिना कोई बड़ा उद्देश्य सफल नहीं हो सकता।

श्री अरविन्द

साहसी बनो

साहसी बनो और अपने बारे में इतना अधिक ना सोचो। तुम दुखी और असन्तुष्ट इसलिये रहते हो क्योंकि तुम अपने छोटे-से अहंकार को अपनी तन्मयता का केंद्र बना लेते हो। इन सब बीमारियों का बड़ा इलाज है अपने-आपको भूल जाना।

निश्चय ही अपने साथ बहुत ज्यादा व्यस्त ना रहना हमेशा अधिक अच्छा होता है।

श्रीमाँ

इस अंक में...

श्रद्धा और ज्ञान

1. *ॐ आनन्दमयी चैतन्यमयि सत्यमयि परमे (प्रार्थना और ध्यान)* 5
2. *सम्पादकीय* 6
3. *परिचयात्मक* 7
   माताजी और एक आम
4. *कठिनाई में...* 9
   श्री अरविन्द
5. *ज्योति-पथिक* 14
   श्रीमती इन्दु पिल्लै
6. *सम्पूर्ण समर्पण* 16
   श्रीमाँ
7. *गीतांजलि* 17
   रविन्द्रनाथ टैगोर
8. *बृजघाट की महफिल* 18
   नलिन धोलकिया
   फ़क़ीर की गुफ़ा से
9. *मानव और भागवत प्रेम* 20
   श्री अरविन्द
10. *ज़ेन विचार* 21
11. *सावित्री* 23
    विमला गुप्ता
12. *उपले बेचने वाली पर श्री अरविन्द की कृपा* 28
    श्याम कुमारी
13. *प्रेरणायें* 30
14. *आत्मरक्षा की कक्षायें* 32
15. *आश्रम में पिछली तिमाही के कार्यक्रम* 33
16. *आश्रम में चौथी कक्षा के बच्चों का कैंप* 35
17. *आश्रम गैलेरी* 36
18. *आत्मरक्षा वर्कशॉप* 37
19. *आश्रम परिसर दिल्ली में सिलाई प्रशिक्षण* 38
20. *हमारी गतिविधियाँ* 39

ॐ आनन्दमयी चैतन्यमयि सत्यमयि परमे

(प्रार्थना और ध्यान)

यह सब कोलाहल किस लिये, यह दौड़-धूप, यह व्यर्थ की थोथी हलचल किस लिये? यह बवंडर किस लिये जो मनुष्यों को झंझावात में फँसे हुये मक्खियों के दल की भाँति उड़ाये ले जाता है? यह समस्त व्यर्थ में नष्ट हुई शक्ति, ये सब असफल प्रयत्न कितना शोकप्रद दृश्य उपस्थित करते हैं। लोग रस्सियों के सिरे पर कठपुतलियों की भाँति नाचना कब बन्द करेंगे? वह यह भी नहीं जानते कि कौन या क्या वस्तु उनकी रस्सियों को पकड़े उनको नचा रही है। उनको कब समय मिलेगा शांति से बैठकर अपने-आप में समाहित होने का, अपने-आपको एकाग्र करने का, उस आंतरिक द्वार को खोलने का जो तेरे अमूल्य खज़ाने, तेरे असीम वरदान पर परदा डाल रहा है?...

अज्ञान और अंधकार से भरा हुआ, मूढ़ हलचल तथा निरर्थक विक्षेपवाला उनका जीवन मुझे कितना कष्टप्रद और दीनहीन लगता है जबकि तेरे उत्कृष्ट प्रकाश की एक किरण, तेरे दिव्य प्रेम की एक बूँद इस कष्ट को आनन्द के सागर में परिवर्तित कर सकती है।

हे प्रभु मेरी प्रार्थना तेरी ओर उन्मुख होती है, आखिर ये लोग तेरी शान्ति तथा उस अचल और अदम्य शक्ति को जान लें जो अविचल धीरता से प्राप्त होती है। और यह धीरता केवल उन्हीं के हिस्से आती है जिनकी आँखें खुल गईं हैं और जो अपनी सत्ता के जाज्वल्यमान केन्द्र में तेरा चिन्तन करने योग्य बन गये हैं।

परन्तु अब तेरी अभिव्यक्ति की घड़ी आ गयी है। और शीघ्र ही आनन्द का स्तुति-गान सब दिशाओं से फूट पड़ेगा। इस घड़ी की गम्भीरता के आगे मैं भक्तिपूर्वक शीश नवाती हूँ।

श्रीमाँ

सम्पादकीय

1914 में प्रथम बार श्री माँ के पांडिचेरी आगमन और वर्ष 1920 में पूर्ण रूप से पांडिचेरी रहने के लिये आने के उपलक्ष में 1939 से 24 अप्रैल, चतुर्थ दर्शन दिवस के रूप में मनाया जाने लगा। इस दिन श्री माँ और श्री अरविन्द साथ साथ सभी आश्रम वासियों को दर्शन देते थे। यह दिन हम सब के लिये बहुत महत्वपूर्ण है। नवदुर्गों के इस पावन मास में कर्मधारा का यह अंक इस दिन को समर्पित है। श्री अरविंद कहते हैं, **'प्रत्येक साधक के लिये बिना अपवाद जो नियम मैंने बना रख है वह यह है कि वे श्रीमाँ के द्वारा ही प्रकाश और शक्ति पायेंगे सीधे मुझसे नहीं, और उन्हीं के द्वारा वे अपनी आध्यात्मिक उन्नति में पथ प्रदर्शन पायेंगे। मैंने किसी अल्पकालिक प्रयोजन के लिये यह प्रबन्ध नहीं किया है बल्कि इसलिये कि यही एकमात्र सही और प्रभावकारी तरीका है, अगर हम यह दृष्टि रखें कि वे कौन हैं और उनकी शक्ति क्या है।'**

श्रीमाँ की सत्ता त्रिविध है। श्री अरविंद ने कहा-'वे विश्वातीता' आद्या परा शक्ति हैं, इस रूप में वे सब लोकों से उपर हैं और वहाँ से वे परम पुरूष भगवान के नित्य अव्यक्त रहस्य के साथ सृष्टि का सम्बन्ध जोड़े रहती हैं। फिर वे विश्वव्यापिनी समष्टिरूपिणी महाशक्ति हैं जो इन सब जीव जगतों की सृष्टिकर्ता और इन अनंत गतियों और शक्तियों को धारण करती हैं, उनमें समाये रहतीं, उन्हें पुष्ट और परिचालित करती हैं। फिर वे हैं व्यष्टि रूपिणी, इस रूप में वे अपनी सत्ता के उन दो व्रहदतर स्वरूपों को मूर्तिमान करती हैं, उनकी गतिविधि हमें प्रतीत कराती और उन्हें हमारे निकट कर देती हैं।

माँ ही है मनुष्य और भागवती प्रकृति के बीच मध्यस्था शक्ति'। श्रीमाँ के प्रति लोगों की अनभिज्ञता को दूर करने के इस प्रयास में हम परिचयात्मक कड़ी का द्वितीय भाग इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं।

आशा है सुधि पाठकों के लिये यह अंक बोधगम्य होने के साथ साथ उनकी साधना के नये आयामों को भी स्पर्श करता हुआ होगा। इस विषय में पाठक अपने विचार हमें दिल्ली आश्रम की वैबसाइट पर भेज सकते हैं। उनके विचारों का हम स्वागत करते हैं।

रूपा गुप्ता

अपने जीवन को सत्य की सच्ची खोज में परिणत कर दो और वह जीने के योग्य बन जायेगा।

श्रीमाँ

परिचयात्मक

चहुँमुखी विधाएँ

श्रीमाँ के जितने व्यक्तित्व थे उन्हें मन द्वारा आज तक समेटा नहीं जा सका है। योग की जिन उपत्यकाओं में मानव के दिव्यीकरण के लिये श्री अरविन्द कार्य कर रहे थे, उनसे दस हजार मील दूर ठीक उन्हीं उपत्यकाओं में उन्हीं उद्देश्यों को लेकर श्रीमाँ फ्रांस में कार्य कर रही थीं। उनकी सारी साधनाएँ मनुष्य को जीवन से जोड़ने के लिये, उससे अलग करने के लिये नहीं, और वर्तमान की अधकचरी चेतना से उसे ऊपर उठा ले जाने के लिये थीं जिससे मानव जीवन जीने लायक, सुन्दर और सामंजस्यपूर्ण बने। श्रीमाँ श्री अरविन्द योग और दर्शन की व्याख्याकार और शक्ति थीं। उन्होंने 'दिव्य जीवन', 'योग समन्वय', 'विचार और सूत्र' जैसे जटिल अन्तर्दर्शनों को स्वयं जी-जी कर माँ के दूध की उज्जवलता और सहजता के बोध में अभीप्सुओं को पिलाया है। वे असीम की गायिका और अचिन्त्य की कलाकार थीं जिसकी एक झलक पा जाने के लिये भारतीय ही नहीं, पश्चिम के लोग भी भौतिकता के कवचों से बाहर निकलकर सड़कों में भीड़ लगा लेते थे। उनका मातृप्रेम विश्व माँ का जीता जागता प्रेम था जिसका एक बूँद पा लेने के लिये विश्व के हर क्षेत्र की महानतम विभूतियाँ उनकी बालकनी की ओर घंटों टकटकी लगाये खड़ी रहती थीं। बच्चों से उनका प्यार इतना अधिक था कि दिन के कई घण्टों वे बच्चों के साथ खेल के मैदान और विद्यालय में बिताती थीं। 80 वर्ष की आयु तक वे मैदान में टेनिस खेलतीं और विविध खेलों के माध्यम से अपनी चेतना का बच्चों में संचार करती थीं। आश्रम में कढ़ाई, बुनाई, चित्रकला, खेल, मनोरंजन, भोजन व्यवस्था, बागवानी, कृषि, कुटीर उद्योग और जीवन की छोटी से छोटी दैनिक वृत्तियाँ भी साधना के गंभीर अंग बन चुकी थीं। इन्हें देखने के लिये ही स्वर्गीय पं0 जवाहरलाल नेहरू दक्षिण के अपने निर्धारित कार्यक्रमों को रद्द कर श्रीमाँ के पास घंटों बैठकर उस गंभीर वातावरण में थोड़ा जी लेना श्रेयस्कर मानते थे। उन्होंने एक बार कहा था कि इस आश्रम में सही मानव को गढ़ा जा रहा है। वेदों के प्रसिद्ध ज्ञाता को श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने आश्रम में श्री माँ की अभिव्यक्तियों को देखकर कहा था- "अरे! यही तो वैदिक समाज है।"

श्रीमाँ और श्री अरविन्दाश्रम

अगर ऐसा कहा जाये कि श्री अरविन्दाश्रम पूरी की पूरी श्री माँ की सृष्टि है तो अत्युक्ति ना होगी। 1926 के पूर्व श्री अरविन्द के सान्निध्य में केवल दस-पाँच अंतरंग शिष्य थे जिनमें कुछ तो उनके क्रान्तिकारी राजनीतिक जीवन के मित्र थे और बाद में श्री अरविन्द के शिष्य बन गये थे। श्रीमाँ के हाथों में साधकों के निर्देशन का दायित्व जाते ही एक तो लोगों की साधना में द्रुति गति आई, दूसरे साधकों की संख्या में तेजी के साथ वृद्धि हुई। व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों प्रकार से श्रीमाँ साधकों के बहुत नजदीक आईं और सोते-जागते हर समय उनका मार्गदर्शन किया व उनके रास्ते की बाधाओं को अपनी शक्ति से दूर किया। साधकों की बढ़ती संख्या के साथ उनकी सुख-सुविधा और आश्रम के स्वावलम्बन के लिये बहुत सारे विभागों को खोलना पड़ा, धन की व्यवस्था करनी पड़ी और एक ऐसी प्रयोगशाला का निर्माण करना पड़ा

जो समूचे विश्वगत जीवन की उत्तम बानगी हो। श्रीमाँ अन्त तक इस आश्रम की संचालिका बनी रहीं और श्री अरविन्द एक अनुमंता के रूप में श्रीमाँ के कार्यों को मूक स्वीकृति देते रहे। धीरे-धीरे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्णत्व प्राप्त करने की दृष्टि से दुनिया की अनेक प्रतिभाएँ- चोटी के खिलाड़ी, सेना के जनरल, श्रेष्ठतम कलाकार, वास्तुकला निर्माता, यंत्री, कारीगर, कवि, प्रध्यापक, साहित्यकार और साधक अपनी परिपूर्णता के लिये माँ के सान्निध्य में खिचे चले आये। केवल राजनीतिज्ञों के निवास के लिये आश्रम संस्थान नहीं रहा क्योंकि श्रीमाँ की सम्मति में राजनीति जीवन को सबसे अधिक गंदला बनाती है।

श्रीमाँ केवल आश्रम की संगठन और संचालित शक्ति ही नहीं, वे उसकी आत्मा थीं। पुराने साधक उन दिनों के संस्मरण सुनाते आज भी नहीं अघाते जब श्रीमाँ ने उनकी साधना अपने कुशल हाथों में लेकर कुछ ही महीनों के भीतर उन्हें चेतना के शीर्षस्थ लोकों तक एक ही झटके में पहुँचा दिया और साधकों के हाथ उपलब्धियों के बटेर लग गये। उठते-बैठते, सोते-जागते श्रीमाँ की सूक्ष्म दृष्टि प्रत्येक शिशु पर शाश्वतता का प्रकाश बनकर दिशानिर्देशन करती थी।

स्वयं श्री अरविन्द ने स्वीकार किया है कि माँ के आने से उनकी जो साधना वर्षों में पूरी होती वह बहुत शीघ्र पूरी हुई।

माताजी और एक आम

एक बार किसी निर्धन व्यक्ति ने माताजी के नाम मनीऑर्डर से आठ आने भेजे। संदेश में लिखा था- "माताजी आप एक आम खरीदकर खा लेना।" माताजी उसके प्रेममय संकेत से अभिभूत हो उठीं। उन्होंने उसी क्षण द्युमनभाई को बुलवाया और मनीऑर्डर देकर कहा कि- "अभी एक आम खरीदकर लाओ।" वे झट बाजार गये और आम खरीद लाये और माताजी को दे दिया।

उन्होंने उसको स्वयं अपने हाथ से काटा और उसकी एक फाँक खायी जबकि उन्हें आम विशेष पसन्द ना था।

कठिनाई में...

श्री अरविन्द

साधना की प्रारंभिक अवस्था में बराबर ही कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं और उन्नति में बाधाएँ आती रहती हैं तथा जब तक आधार तैयार नहीं हो जाता तब तक अंदर के दरवाजों के खुलने में देर लगती है। यदि ध्यान करते समय बराबर ही तुम्हें निश्चलता का अनुभव होता हो और आंतर ज्योति की झलकें मिलती हों, यदि तुम्हारी अंतर्मुखी प्रवृत्ति इतनी प्रबल होती जा रही हो कि बाहरी बंधन क्षीण होने लगे हों और प्राणगत विक्षोभ अपनी शक्ति खोने लगे हों तो इसका मतलब है कि साधना में तुम्हारी बहुत कुछ उन्नति हो गयी है।

योग का मार्ग लंबा है, इस मार्ग की एक-एक इंच जमीन को बहुत अधिक प्रतिरोध का सामना करते हुए जीतना होता है, और साधक में जिस गुण का होना सबसे अधिक आवश्यक है वह है धैर्य और एकनिष्ठ अध्यवसाय और उसके साथ-ही-साथ ऐसा श्रद्धा-विश्वास जो सब प्रकार की कठिनाइयों के आने, विलंब होने तथा आपात विफलताओं के होने पर भी दृढ़ बना रहे।

साधना की प्रारंभिक अवस्था में प्रायः ये बाधाएँ आया करती हैं। इसके आने का कारण यह है कि अभी तक तुम्हारी प्रकृति पर्याप्त रूप से ग्रहणशील नहीं हो पायी है। तुम्हें यह पता लगाना चाहिये कि तुम्हारी बाधा कहाँ पर है, मन में है या प्राण में, और फिर तुम्हें वहाँ अपनी चेतना को प्रसारित करने का प्रयास करना चाहिये, वहाँ पर पवित्रता और शांति का अधिक मात्रा में आवाहन करना चाहिये तथा उस पवित्रता और शांति में अपनी सत्ता के उस भाग को सच्चाई के साथ और पूर्ण रूप में भागवत शक्ति के चरणों में अर्पण कर देना चाहिये।

प्रकृति का प्रत्येक भाग अपनी पुरानी चाल ढाल को ज्यों-का-त्यों बनाये रखना चाहता है और जहाँ तक उससे संभव होता है, किसी मूलगत परिवर्तन और उन्नति को होने देना नहीं चाहता, क्योंकि ऐसा होने पर उसे अपने से किसी उच्चतर शक्ति के अधीन होना पड़ता है, और उसे अपने क्षेत्र में, अपने पृथक् साम्राज्य में अपने प्रभुत्व को खोना पड़ता है। यही कारण है कि रूपांतर की प्रक्रिया इतनी लंबी और कठिन बन जाती है।

मन निस्तेज हो जाता है, क्योंकि मन का नीचे का आधार है भौतिक मन जिसका धर्म है तमस् या जड़त्व-कारण जड़तत्व का मूल धर्म है तामसिकता। जब लगातार या बहुत समय तक उच्चतर अनुभूतियाँ होती रहती हैं तब मन के इस भाग में थकावट आ जाती है अथवा प्रतिक्रिया होने के कारण बेचैनी या जड़ता उत्पन्न हो जाती है। इस अवस्था से बचने का एक उपाय है समाधि की अवस्था में शरीर को शांत बना दिया जाता है, भौतिक मन एक प्रकार की तंद्रा की अवस्था में आ जाता है, और आंतर चेतना को अपनी अनुभूतियाँ लेने के लिये स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है। इसमें असुविधा यह है कि समाधि अनिवार्य हो जाती है और जाग्रत चेतना का प्रश्न हल नहीं होता; वह अपूर्ण ही रह जाती है।

ध्यान के सामने यदि वह कठिनाई उपस्थित होती है कि सभी प्रकार के विचार मन में घुस आते हैं तो यह विरोधी शक्तियों के कारण नहीं होता, बल्कि यह

मानव-मन के साधारण स्वभाव के कारण होता है। सभी साधकों को यह कठिनाई होती है और बहुतों के साथ तो यह बहुत लंबे समय तक लगी रहती है। इससे छुटकारा पाने के कई उपाय हैं। उनमें एक यह है कि विचारों को देखा जाये और यह निरीक्षण किया जाये कि वे मानव-मन के किस स्वभाव को प्रकट कर रहे हैं, पर उन्हें किसी प्रकार की स्वीकृति ना दी जाये और उन्हें तब तक दौड़ते रहने दिया जाये जबतक वे स्वयं ही थककर रुक ना जायें – इसी उपाय का अवलंबन लेने की सलाह विवेकानंद ने अपने राजयोग में दी है।

दूसरा उपाय है इन विचारों को इस प्रकार देखना मानों वे अपने ना हों, उनसे पीछे हटकर साक्षी पुरुष के रूप में अवस्थित होना और उन्हें अनुमति देने से इंकार करना – इस पद्धति में ऐसा मानते हैं कि विचार बाहर से, प्रकृति से आ रहे हैं और उन्हें ऐसे अनुभव करना होता है मानों वे पाथिक हों जो मन के प्रदेश से होकर जा रहे हैं और जिनसे ना तो अपना कोई संबंध हो और ना जिनके विषय में अपनी कोई दिलचस्पी हो। इस तरह करने से प्रायः यह परिणाम होता है कि कुछ समय के बाद मन दो भागों में विभक्त हो जाता है, एक भाग तो वह होता है जो मनोमय साक्षी पुरुष होता है, जो देखा करता और पूर्ण रूप से अक्षुब्ध तथा अचंचल बना रहता है; और दूसरा भाग वह होता है जो देखने का विषय होता है, प्रकृति-भाग होता और जिसमें से होकर विचार आया-जाया करते हैं या जिसमें विचरण करते हैं। उसके बाद साधक इस प्रकृति-भाग को भी निश्चल-नीरव या शांत करने का प्रयास कर सकता है। एक तीसरा उपाय है, एक सक्रिय पद्धति भी है, जिसमें साधक यह देखने की चेष्टा करता है कि विचार कहाँ से आ रहे हैं और उसे यह पता चलता है कि वे उसके अंदर से नहीं, बल्कि मानों उसके सिर के बाहर से आ रहे हैं; अगर साधक उन्हें इस प्रकार आते हुए देख ले तो फिर उनके भीतर घुसने से पहले ही उन्हें एकदम बाहर फेंक देना होता है। यह पद्धति संभवतः सबसे अधिक कठिन है और इसे सब लोग नहीं कर सकते, पर यदि इसे किया जा सके तो निश्चल-नीरवता प्राप्त करने का यह सबसे अधिक सीधा और सबसे अधिक शक्तिशाली मार्ग है।

अपनी दृष्टि को किसी वर्तमान अंधकार की अपेक्षा आने वाले प्रकाश की ओर अधिक लगाओ। श्रद्धा, प्रसन्नता और अंतिम विजय में विश्वास – ये सब चीज़ें ही सहायता करती हैं, ये प्रगति को अधिक सहज और तीव्र बनाती है। जो अधिक अच्छी अनुभूतियाँ तुम्हें प्राप्त होती हैं उनका अधिक-से-अधिक लाभ उठाओ;

यह आवश्यक है कि तुम अपने अंदर की अशुद्ध वृत्तियों को देखो और जानो; क्योंकि वे ही तुम्हारे दुःख के मूल हैं और अगर तुम्हें उनसे छुटकारा पाना हो तो तुम्हें उनका लगातार त्याग करना ही होगा। परंतु तुम बराबर अपने दोषों और अशुद्ध वृत्तियों का ही चिंतन मत किया करो। तुम उस बात पर अधिक अपना ध्यान एकाग्र करो जो तुम्हें होना है, जो तुम्हारा आदर्श है और यह विश्वास बनाये रखो कि जब यही तुम्हारा लक्ष्य है तब इसे पूरा होना ही होगा और यह अवश्य पूरा होगा। बराबर दोषों और अशुद्ध वृत्तियों को देखते रहने से चित्त उदास होता है और श्रद्धा दुर्बल होती है।

अपनी दृष्टि को किसी वर्तमान अंधकार की अपेक्षा आने वाले प्रकाश की ओर अधिक लगाओ। श्रद्धा, प्रसन्नता और अंतिम विजय में विश्वास – ये सब चीज़ें ही सहायता करती हैं, ये प्रगति को अधिक सहज और

तीव्र बनाती है। जो अधिक अच्छी अनुभूतियाँ तुम्हें प्राप्त होती हैं उनका अधिक-से-अधिक लाभ उठाओ; वैसी एक भी अनुभूति इन पतनों और विफलताओं से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। पर जब ऐसी अनुभूति बंद हो जाये तो उसके लिये अनुताप मत करो या उसके कारण निरुत्साहित मत हो जाओ, बल्कि भीतर में शांत बने रहो और यह अभीप्सा करो कि वह फिर से एक अधिक स्थायी रूप ग्रहण करके आये तथा और भी अधिक गंभीर और पूर्ण अनुभूति की ओर ले जाये। सर्वदा अभीप्सा करो, पर करो अधिकाधिक अचंचल रहते हुए तथा भगवान् की ओर अपने-आपको सरल और संपूर्ण रूप में उद्घाटित करते हुए।

अधिकांश मनुष्यों का निरन्तर प्राण भयंकर दोषों तथा ऐसी कुछ वृत्तियों से भरा रहता है जो विरोधी शक्तियों को प्रत्युत्तर देती हैं। अंतरात्मा को निरंतर उद्घाटित रखने, इन प्रभावों का अनवरत त्याग करते रहने, विरोधी शक्तियों के सभी सुझावों से अपने-आपको अलग रखने से तथा श्रीमाँ की शक्ति से स्थिरता, शांति, ज्योति और पवित्रता को अपने अंदर प्रवाहित होने देने से अंत में हमारा आधार विरोधी शक्तियों के घेरे से मुक्त हो जायेगा।

जिस बात की आवश्यकता है वह है अचंचल बने रहना, अधिकाधिक अचंचल बने रहना, इन सब प्रभावों को इस प्रकार देखना कि ये तुम्हारे कुछ नहीं हैं, ये कहीं बाहर से आकर घुस पड़े हैं, इनसे अपने-आपको अलग करना, इन्हें अस्वीकार करना तथा भागवत शक्ति पर दृढ़ विश्वास बनाये रखना। अगर तुम्हारा हृतपुरुष भगवान् को पाने की इच्छा करता हो, तुम्हारा मन सच्चा हो और निम्न प्रकृति तथा समस्त विरोधी शक्तियों से मुक्त होना चाहता हो और अगर तुम अपने हृदय में श्रीमाँ की शक्ति का आवाहन कर सको तथा अपनी व्यक्तिगत शक्ति की अपेक्षा उसी पर अधिक निर्भर कर सको तो अंत में विरोधी शक्तियों का यह घेरा नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा और उसका स्थान शांति और सामर्थ्य ग्रहण कर लेंगे।

निम्न प्रकृति अज्ञानमयी और अदिव्य है, यह स्वयं ज्योति और सत्य का विरोध नहीं करती, बस यह उनकी ओर खुली हुई नहीं है। परंतु जो विरोधिनी शक्तियाँ हैं वे केवल अदिव्य ही नहीं, वरन् दिव्यता की शत्रु हैं; वे निम्न प्रकृति का उपयोग करती हैं, उसे कुमार्ग में ले जाती हैं, उसे विकृत वृत्तियों से भर देती हैं तथा इस उपाय के द्वारा वे मनुष्य को प्रभावित करती और यहाँ तक कि उसके अंदर प्रवेश करने और उसे अपने अधिकार में कर लेने की या कम-से-कम उसे पूरी तरह अपने वश में कर लेने की चेष्टा करती हैं।

सब प्रकार की अतिरंजित आत्मनिंदा से तथा पाप, कठिनाई या विफलता का बोध होने पर अवसन्न होने की आदत से अपने-आपको मुक्त करो। ये सब भाव वास्तव में तनिक भी सहायता नहीं करते, बल्कि उल्टे ये एक बहुत बड़ी बाधा हैं और हमारी उन्नति को रोकते हैं। ये सब धार्मिक मनोवृत्ति के परिचायक हैं, यौगिक मनोवृत्ति से इनका कुछ भी संबंध नहीं। योगी को चाहिये कि वह प्रकृति के सारे दोषों को इस दृष्टि से देखे कि ये निम्न प्रकृति की क्रियाएँ हैं और ये सबके अंदर होती रहती हैं, और भागवत शक्ति में पूर्ण विश्वास रखते हुए स्थिरता और दृढ़ता के साथ इनका नित्य निरंतर त्याग करता रहे–पर ना तो किसी प्रकार की दुर्बलता या अवसाद या अवहेलना के भाव को, ना किसी प्रकार की उत्तेजना, अधीरता या उग्रता के भाव को अपने अंदर आने दे।

योग साधना का साधारण नियम यह है कि तुम अवसाद आने पर अपने-आपको अवसन्न मत होने दो, उससे अपने को अलग कर लो, उसके कारण को देखो और उस कारण को दूर करो; क्योंकि वह कारण सर्वदा

ही अपने अंदर होता है; संभवतः कहीं कोई प्राण में दोष होता है, या तो किसी अशुद्ध प्रवृत्ति को प्रश्रय दिया गया होता है अथवा कोई तुच्छ वासना कभी तृप्त होने के कारण, कभी अतृप्त रह जाने के कारण प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। योग साधना में बहुत बार एक वासना को तृप्त कर देने पर, किसी अशुद्ध प्रवृत्ति को स्वच्छंद खेलने देने पर वह किसी अतृप्त वासना की अपेक्षा अधिक बुरी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। तुम्हें इस बात की आवश्यकता है कि तुम अधिकाधिक अपने अंतर की गंभीरता में निवास करो, अपने बाह्य प्राण और मन में, जो इन बाह्य स्पर्शों के लिये खुले हुए हैं, कम निवास करो। अंतरतम हृत्पुरुष इन सबके द्वारा पीड़ित नहीं होता और अपनी वास्तविक सत्ता के लिये विजातीय समझता है।

जिन कठिनाइयों और कुप्रवृत्तियों का तुम पर आक्रमण होता है, उनके साथ बर्ताव करने में संभवतः तुम यह भूल करते हो कि तुम उनके साथ बहुत अधिक तादात्म्य स्थापित कर लेते हो और उन्हें अपनी प्रकृति का अंग समझने लगते हो। तुम्हें तो बल्कि उनसे अलग हो जाना चाहिये, अपने-आपको उनसे निर्लिप्त और वियुक्त कर लेना चाहिये, यह समझना चाहिये कि वे अपूर्ण और अशुद्ध विश्वव्यापी निम्न प्रकृति की क्रियाएँ हैं, वे ऐसी शक्तियाँ हैं जो तुम्हारे अंदर प्रवेश करती और अपनी अभिव्यक्ति के लिये तुम्हें अपना यंत्र बनाने की चेष्टा करती हैं। इस प्रकार अपने-आपको इनसे निर्लिप्त और वियुक्त कर लेने पर तुम्हारे लिये यह अधिक संभव हो जायेगा कि तुम अपने एक ऐसे भाग का – अपनी अंतर या अपनी चैत्य सत्ता का पता पा लो और उसीमें अधिकाधिक निवास करने लगो जो इन सब बाह्य वृत्तियों से आक्रांत या पीड़ित नहीं होता, इन सबको अपने से विजातीय समझता है और स्वभावतः ही इन्हें अनुमति देने से इंकार करता है और अपने-आपको निरंतर भागवत शक्तियों तथा चेतना के उच्चतर स्तरों की ओर मुड़ा हुआ या उनसे संबंधित अनुभव करता है। अपनी सत्ता के उस भाग को ढूँढ निकालो और उसी में निवास करो; ऐसा करने में समर्थ होना ही योग साधना की सच्ची नींव है।

अगर तुम इस प्रकार अलग हट जाओ तो ऊपरी सतह के संघर्ष के पीछे, अपने अंदर ही एक ऐसी प्रशांत स्थिति प्राप्त करना भी तुम्हारे लिये अधिक आसान हो जायेगा जहाँ से तुम अपनी मुक्ति के लिये कहीं अधिक सफलता के साथ भागवत सहायता का आवाहन कर सकोगे। भागवत उपस्थिति, स्थिरता, शांति, शुद्धि, शक्ति, ज्योति, प्रसन्नता और प्रसारता तुम्हारे ऊपर विद्यमान हैं और तुम्हारे अंदर अवतरित होने के लिये प्रतीक्षा कर रही हैं। इस पीछे की प्रशांत स्थिति को प्राप्त करो और फिर तुम्हारा मन भी पहले से अधिक प्रशांत हो जायेगा और प्रशांत मन के द्वारा तुम सबसे पहले शुद्धि और शांति का और उसके बाद भागवत शक्ति का आवाहन कर सकोगे। अगर तुम इस शांति और शुद्धि को अपने अंदर अवतरित होते हुए अनुभव कर सको तो फिर तुम उनका तब तक बार-बार आवाहन कर सकते हो जब तक वे तुम्हारे अंदर प्रतिष्ठित होना आरंभ ना कर दें; उस समय तुम यह भी अनुभव करोगे कि इन वृत्तियों को परिवर्तित करने तथा तुम्हारी चेतना को रूपांतरित करने के लिये भागवत शक्ति तुम्हारे अंदर क्रिया कर रही है। उसकी इस क्रिया के अंदर तुम श्रीमाँ की उपस्थिति और शक्ति के विषय में भी सचेतन हो जाओगे। जब एक बार यह हो जाता है तब बाकी सब चीज़ें समय पर तथा तुम्हारे अंदर होने वाले तुम्हारी यथार्थ और दिव्य प्रकृति के क्रम-विकास पर निर्भर करती हैं। अपूर्णताओं का होना, यहाँ तक कि बहुत अधिक और भयानक अपूर्णताओं का होना भी, योगसाधना की उन्नति में स्थायी रूप से बाधक

नहीं हो सकता। मैं यहाँ यह नहीं कहता कि पहले जो उद्घाटन हो चुका है वह फिर से प्राप्त होगा, क्योंकि मेरा अनुभव तो यह बतलाता है कि प्रतिरोध और संघर्ष का काल निकल जाने पर साधारणतः एक नवीन और बृहत्तर उद्घाटन होता है, एक विशालतर चेतना प्राप्त होती है तथा पहले जो कुछ प्राप्त किया गया था पर जो उस समय खो गया मालूम होता था – किंतु केवल मालूम ही होता था – उससे भी साधक आगे बढ़ जाता है। एकमात्र वस्तु जो स्थायी रूप से बाधक हो सकती है – परंतु उसका भी होना आवश्यक नहीं है, कारण उसे भी परिवर्तित किया जा सकता है – वह है मिथ्याचार, सच्चाई का अभाव और वह तुममें नहीं है। अगर अपूर्णता बाधक होती तो कोई भी मनुष्य योग में सफलता ना प्राप्त कर सकता; कारण सब मनुष्य ही अपूर्ण हैं; और मैंने जो कुछ देखा है उसके आधार पर मैं यह निःसन्देह होकर नहीं कह सकता कि जिनमें योग की बड़ी-से-बड़ी योग्यता होती है प्रायः उन्हीं में बड़ी-से-बड़ी अपूर्णताएँ नहीं होती अथवा किसी समय नहीं रही होतीं। संभवतः तुम जानते ही हो कि सुकरात ने अपने चरित्र पर क्या टिप्पणी की थी; ठीक यही बात बहुत-से बड़े-बड़े योगी अपनी आरंभिक मानवी प्रकृति के विषय में कह सकते हैं।

योग में जो बात अन्त में जाकर सबसे अधिक काम की साबित होती है वह है सच्चाई और उसके साथ-साथ इस पथ पर डटे रहने का धैर्य – बहुत-से लोग इस धैर्य के बिना भी लक्ष्य तक पहुँच जाते हैं, क्योंकि विद्रोह, अधैर्य, अवसाद, निराशा, क्लांति, श्रद्धा की सामयिक हानि इत्यादि के होने पर भी बाह्य सत्ता की अपेक्षा कहीं महान् एक शक्ति, आत्मा की शक्ति, अंतरात्मा की आवश्यकता का वेग उन्हें घने बादलों और कुहासे के अंधकार के भीतर से ढकेलता हुआ उनके लक्ष्य तक पहुँचा देता है। अपूर्णताएँ बाधक हो सकती हैं और कुछ समय के लिये साधक को बुरी तरह गिरा भी सकती हैं; परंतु वे स्थायी बाधा नहीं हो सकतीं। प्रकृति में कहीं कोई प्रतिरोध होने के कारण जो कभी-कभी तमसाच्छन्न अवस्था आ जाती है वह साधना में विलंब लाने का कहीं अधिक गंभीर कारण बन सकती है, पर कभी भी सर्वदा टिक नहीं सकती।

ज्योति-पथिक

श्रीमती इन्दु पिल्लै

23 अप्रैल, 1956 को हमारे विद्यालय का जन्म हुआ था। श्रीमाँ ने उस दिन भेजे हुए अपने सन्देश में कहा था, **"पृथ्वी पर एक नई ज्योति का अवतरण हुआ है। आज जो नया विद्यालय खुला है उसी ज्योति से प्रशासित हो।"**

23 अप्रैल, 1978 को हमने इस ज्योति-पथिक का बाईसवाँ जन्म-दिन अत्यन्त शान्त, गम्भीर व प्रेरक वातावरण में आश्रम के ध्यान-कक्ष में मनाया। अध्यापकों व छात्रों ने मिलकर अत्यन्त सुन्दर भक्ति-गीत गाये व श्री अरविन्द और श्रीमाँ के शब्दों का पाठ किया। ऐसा प्रतीत होता था मानों वहाँ उपस्थित लोगों के मन एक सूत्र में पिरोये सुन्दर पुष्प हों। निश्चित रूप से वह प्रार्थना करने व कृतज्ञता प्रकट करने का दिन था। हमारे आश्रम के संचालक श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर स्कूल के इतिहास विषय में बताते हुए भाव-विभोर हो उठे। उनकी आँखें बार-बार भर आतीं और कण्ठ अवरूद्ध हो जाता। उन्होंने कहा- "ऐसा संगीत, ऐसी वाणी, ऐसा वातावरण अन्यत्र कहाँ मिलेगा। मुझे तो ध्यान-कक्ष में प्रवेश करते ही यह लगा कि आज केवल कृतज्ञता ज्ञापन तथा ध्यान का दिन है।" दो घण्टे इस आनन्दमय वातावरण में बिताने के उपरान्त सब प्रतिभोज में सम्मिलित हुये।

अगले दिन अर्थात् 24 अप्रैल को आचार्य कृपलानी व श्री काका साहब कालेलकर विद्यालय की प्रार्थना-सभा में पधारे। उनका आना ही हमारे लिये आशीर्वाद था। शरीर से वयोवृद्ध दोनों नेता अत्यन्त दुर्बल व क्षीण हैं। अपने समय में इस देश की स्वतंत्रता के लिये वे जिस उत्साह, लगन तपस्या से लड़े वह इतिहास में स्वर्णक्षरों में अंकित है। आज भी श्रीकृपलानी जी ने जब बच्चों को सम्बोधित किया तो लगा कि उन जैसे महान आचार्य ही इतनी प्रेरणा दे सकते हैं। उनकी बुद्धि दर्पण के समान स्वच्छ है व तलवार की धार के समान तीक्ष्ण। इस पर भी इतनी विनम्रता है कि बच्चों से कहने लगे- 'आप लोगों के बीच आकर हमें ही प्रेरणा मिलती है। हम आपको कुछ भी दे नहीं सकते। हम परमेश्वर से अपने लिये आशीर्वाद चाहते हैं। उनका आशीर्वाद आपके भी साथ हो। जब उनका आशीर्वाद मिल जाये तो और क्या चाहिये।'

उन्होंने बच्चों से कहा कि वे ऐसे स्कूल में पढ़ते हैं जिसका नाम श्री अरविन्द व माताजी के साथ जुड़ा हुआ है। ऐसे स्कूल में अध्यापक उनको केवल अच्छी ही बातें बताते हैं। उन्होंने अपने कॉलेज-जीवन के संस्मरण सुनाते हुये बताया कि पूना में किस प्रकार काका साहब और उनके कुछ अन्य मित्र श्री अरविन्द के के लेखों से प्रेरणा पाते थे। उनके कॉलेज-पुस्तकालय में श्री अरविन्द के ओजपूर्ण लेखों से पूर्ण 'वन्देमातरम्' पत्रिका आया करती थी। वह पैसे बचाकर स्वयं उस पत्रिका के ग्राहक बन गये व उसे पढ़ने के लिये इतने लालायित रहते थे कि डाकिये के कॉलेज पहुँचने की प्रतीक्षा नहीं कर पाते थे। वह एक-आध कोस पैदल चलकर उससे रास्ते में ही पत्रिका ले लेते थे और सड़क के किनारे बैठकर ही उसे आद्यान्त पढ़ डालते थे। देश के प्रति विनम्र एक टीले पर समर्पण की भावना उनकी रग-रग में बसी है। उन्होंने कहा- "प्रायः सुनने में आता है कि अमुक व्यक्ति ने देश के लिये कुर्बानी की। कुर्बानी का अर्थ है कि अमुक व्यक्ति को वैसा करने

में तकलीफ हुई। वास्तव में कुर्बानी शब्द इस संदर्भ में ठीक नहीं है। हमें जेल जाने में आनन्द आता था। हँसकर जेल जाते थे और हँसकर बाहर आते थे। वह एक प्रकार का यज्ञ था। उससे हमें खुशी होती थी। अब जो लोग कहते हैं कि हमने कुर्बानी की वह गलत है। यह हमें भली प्रकार समझ लेना चाहिये।"

उसके पश्चात् तो कृपलानीजी का आचार्य स्वरूप सही मानों में देखने को मिला। उनके सामने आठ नौ वर्ष तक की आयु के छोटे-छोटे बच्चे बैठे थे। उनसे बोले- "अब तुम्हारी परीक्षा लेता हूँ। अपने देश का नाम बताओ?"

'भारत'।

"जब प्यार से उसे बुलाते हो तो क्या कहते हो"?

'भारत माता'।

"एक कुटुम्ब में सभी को खाना मिलता है या कुछ को मिलता है कुछ को नहीं?"

कपड़ा व रहने को जगह बराबर मिलती है या नहीं?

'मिलती है।'

"जिस परिवार में कुछ को सुविधाएँ मिलें व कुछ को नहीं तो वह कैसा परिवार कहलाता है? अच्छा या बुरा?"

'बुरा।'

"भारत माता के परिवार में सब को मिलता है या नहीं?"

बच्चों में से 'हाँ' 'नहीं' दोनों उत्तर मिले। फिर सोचकर बच्चों ने कहा- 'सबको नहीं मिलता'।

कृपलानी जी ने फिर पूछा तब क्या करना चाहिये?

बच्चों ने एक स्वर से कहा बाँट कर खाना चाहिये।

कृपलानी जी ने सरलता से कहा- "देखो सब कुछ तुम स्वयं ही बता रहे हो। मैं तुम्हें कुछ नहीं बता रहा। जो कुछ बातचीत हुई है उसे याद रखना। देश को अच्छा कुटुम्ब बनाना है।"

श्री काका साहब कालेलकर ने भी कर्मठता पर ज़ोर देते हुये कहा-" बात करने की बात कम है काम करने की बात ज्यादा। परमहंस विवेकानन्द व गाँधीजी से प्रेरणा मिली जो हमने पाया वह आपको देंगे। जो आप पाये वह आगे देना। इसी तरह भगवान का रामराज्य चल सकता है। उन्होंने कहा कि उनके मित्र कृपलानीजी ने अंग्रेजों को इतना परेशान किया कि अंग्रेज उनसे डरते थे। अब अंग्रेज चले गये तो हम सोचें कि हमें क्या काम करना है।

विद्यालय के स्थापना-दिवस पर उनका आशीर्वाद व प्रेरणा हमारी अमूल्य धरोहर है।

सम्पूर्ण समर्पण

श्रीमाँ

भगवान् के प्रति सम्पूर्ण आत्मदान करने की तीन विशिष्ट पद्धतियाँ हैः

1. समस्त अभिमान का त्याग कर, पूर्ण विनम्रता के साथ उनके चरणों पर साष्टांग प्रणिपात करना।

2. उनके सामने अपनी सत्ता को रख देना, अपने शरीर को सिर से पैर तक पूर्णतः खोल देना, जैसे कि कोई पुस्तक खोल देता है, अपने केन्द्रों को इस प्रकार फैला देना कि उनकी सारी गतिविधियाँ अपने पूर्ण सच्चे रूप में दृष्टिगोचर होने लगें और और कोई भी चीज़ छिपी ना रहे।

3. उनकी गोद में चुपचाप सो जाना, प्रेमपूर्ण और अखण्ड विश्वास के साथ उनके अन्दर विगलित हो जाना। इन क्रियाओं के साथ इन तीन सूत्रों को या अवस्थानुसार किसी एक को जोड़ा जा सकता हैः

मेरी नहीं बस तेरी ही इच्छा पूरी हो।
जैसी तेरी मर्ज़ी, जैसी तेरी मर्ज़ी।
मैं चिरकाल तेरा हूँ।

साधारणतया जब इन क्रियाओं को ठीक-ठीक किया जाता है तो अन्त में पूर्ण तादात्म्य प्राप्त हो जाता है, अहं विलीन हो जाता है और परमोच्च उल्लास का अनुभव होता है।

गीतांजलि

रविन्द्रनाथ टैगोर

एक दिन मेरे मन में विचार आया

एक दिन मेरे मन में विचार आया-
जो कुछ होना था, हो चुका,
मेरी यात्रा का अन्तिम पड़ाव आ गया।
मुझे प्रतीत हुआ, अब आगे मार्ग नहीं है,
अब काम नहीं रहा, पाथेय भी समाप्त हो गया।
समय आ गया है कि अब
जीर्ण-शीर्ण जीवन तथा इन फटे-पुराने चिथड़ों के साथ
नीरव अंतराल में जाना है,
किन्तु आज देखता हूँ।
तेरी लीला का कोई अंत नहीं, नवीनता की सीमा नहीं!
अपने नये मनोरथ पूरे करने के लिये तूने मुझे फिर नया जीवन दे दिया।
मेरे गीत के पुराने स्वर जब अपना माधुर्य खो बैठे,
तो वे नये गाने के स्वर में हृदय के स्रोत से फूट उठे!
और जहाँ पुरानी पथ-रेखा लुप्त हो गई
वहीं से नये-नये मार्गों की दृश्यावली
आँखों के आगे नाचने लगीं।

अपने करुणा जल से मेरे जीवन को

अपने करुणा जल से मेरे जीवन को धोकर निर्मल बना दे
नहीं तो मेरे हाथ तेरे चरणों का स्पर्श कैसे करेंगे?
तुझे अर्पित करने को जो फूलों की डाली सजाई थी,
वह देख, कितनी मैली हो गई।
अब मैं अपना जीवन तेरे चरणों पर कैसे अर्पित कर सकूंगा?
इतने दिन मुझे कोई दुःख नहीं था,
मेरे अंग-अंग पर मैल लगा था
आज तेरी शुभ गोद के लिये मेरे प्राण रो रहे हैं।
नहीं-नहीं, अब कभी धूलि में मुझे सोने नहीं देना!

बृजघाट की महफिल

नलिन धोलकिया

बृजघाट में रहना-'अस्तित्व के लिये संघर्ष' सिद्ध हो रहा था। चौमासे का मौसम था। रहने की व बाथरूम की कोई व्यवस्था ना थी। मिट्टी का तेल था, गैस उपलब्ध ना थी। करूणा दीदी जीवन में पहली बार गीली लकड़ी और कामचलाऊ चूल्हे के साथ स्नेह संबंध स्थापित करने का प्रयत्न-अश्रुपूरित नयनों के साथ-कर रही थीं। मेरा काम था बगीचे से लकड़ी इकट्ठा करना। दिनभर इन सब झंझटों से खून जलता रहता था और रात को हमला होता था मच्छरों का। अपनी साइज से खूंखार ब्रजघाट के मच्छर, अपनी जाति के बेजोड़ मच्छरों के नाते गिनीज़ बुक ऑफ रेकॉर्ड में आसानी से स्थान पा सकते थे।

परंतु चाचाजी अपनी टीम के साथ इन सभी मुसीबतों से बेखबर, निर्माण-कार्य में लगे थे। जहाँ भी जाते थे, चाचाजी पहले बाथरूमों की व्यवस्था करते थे। यहाँ भी उन्होंने व्यवस्थापकों को सूचना दे रखी थी। परन्तु जब पहुँचे तो कुछ भी नहीं हुआ था। पूछा तो उत्तर मिला, "गंगाजी के रहते हुये नहाने की और गंगाजी के मैदान की झाड़ियों के रहते हुये शौच की घर में व्यवस्था करना भयंकर पाप है।"

परंतु चाचाजी गंगाजी और उसके मैदान का इतना ही उपयोग हो यह कैसे सहन करते। बहरहाल, ऐसी विषम परिस्थितियों में भी निर्माण कार्य चल रहा था परिणाम यह हुआ कि चाचाजी खूब बीमार हो गये साँस की तकलीफ तो थी ही, मच्छरों का प्रसाद मलेरिया भी शुरू हो गया था। ऊपर से लगने लगे दस्त।

करुणा दीदी यथावत् जी जान से सेवा में जुटी थीं। परंतु एक रात हालत बहुत ही गंभीर हो गयी। डीहाइड्रेशन हो रहा हो ऐसा लगा। कमजोरी इतनी आ गई कि मुँह से आवाज नहीं निकल रही थी।

घबरा कर करुणा दीदी ने मुझे, नरेन्द्र को जगा कर डॉक्टर को बुलाने के लिये जीप भेजने का आदेश दिया।

नरेन्द्र जगे। महेन्द्र ड्राइवर को भी जगाया। जीप स्टार्ट हुई और दौड़ पड़ी निर्मल पंडित के मंदिर की ओर। इस स्थान का वही कर्ता धर्ता था।

पर जैसे ही चाचाजी ने जीप की आवाज सुनी, पता नहीं कहाँ से उनमें अपूर्व शक्ति का संचार हुआ। जोर से पूछा, "जीप कहां जा रही है ?"

हम लोगों ने सहम कर उत्तर दिया, "डॉक्टर को लाने।"

" क्यों?"

"आपकी तबीयत इतनी खराब है।"

करुणा दीदी ने कहा, "चाचाजी, अभी-अभी आपकी हालत इतनी खराब थी। डॉक्टर को तो दिखाना ही पड़ेगा।"

चाचाजी एकदम दहाड़े, "फेंक दूँगा मैं डॉक्टर को। डॉक्टर आया तो उठा कर बाहर फेंक दूँगा। क्या फिजूल की बात है।"

चाचाजी जानते थे कि ब्रजघाट में सिर्फ वे लोग ही आते हैं जो डॉक्टरों की पहुँच से बाहर हो जाते हैं। यहाँ से वे सीधे स्वर्ग जाएँ इसीलिये दुनिया भर के असाध्य रोगी यहाँलाये जाते हैं। यहाँ डॉक्टर कहाँ मिल सकता है?

चाचाजी की दहाड़ सुनकर मैं भागा-भागा सड़क पर दूर जाकर खड़ा हो गया। जैसे ही जीप आयी

मैंने वहीं रोक दी। डॉक्टर तो गढ़ जाने पर ही शायद मिलता।

मैंने नरेन्द्र को चाचाजी के डॉक्टर को फेंकने के संकल्प के बारे में बताया और जीप को बिना स्टार्ट किये, धक्के देकर चुपचाप अपनी जगह पर ले जाकर खड़ा कर दिया।

जब चाहे बीमार होने की और तुरन्त फिर अपनी स्पिरिट में आ जाने की चाचाजी में अद्भुत क्षमता थी।

फ़क़ीर की गुफ़ा से

दिनांक 16 अक्टूबर की शाम का समय। पूज्य चाचाजी का नौकर रमेश अपने साढ़े तीन वर्षीय एकलौते पुत्र विनायक को जिसकी माँ की मृत्यु उसके जन्म के थोड़े ही दिन बाद हो चुकी है – प्रणाम कराने ले आया। पूज्य चाचाजी ने बच्चे को आशीर्वाद देते हुए बड़े गौर के साथ देखा और रमेश को कहा कि तारा से कहकर इसे आश्रम के विद्यालय में भर्ती करा दो।

मैं पूज्य चाचाजी की इस करुणा वत्सलता और उस बच्चे के भाग्य को देखकर अवाक् रह गया। जिस विद्यालय में प्रवेश के लिये बड़े से बड़े लोग कितना ही चक्कर लगाकर निराश लौट जाते हैं आज एक गरीब और अनाथ बच्चे का भाग्य निर्धारण मिनटों में हो गया।

त्रियुगी नारायण

मानव और भागवत प्रेम

श्री अरविन्द

मानव-प्रेम अधिकांश में प्राणिक और भौतिक होता है जिसे कुछ मानसिक समर्थन प्राप्त होता है- यह एक स्वार्थहीन, उच्च और शुद्ध अवस्था तथा अभिव्यक्ति को केवल तभी प्राप्त हो सकता है जबकि इसे चैत्य का स्पर्श प्राप्त हो। यह सच है कि यह अधिकांश अवसरों पर अज्ञान, आसक्ति, आवेग और कामना का एक मिश्रण होता है। पर यह चाहे जो हो, जो मनुष्य भगवान के पास पहुँचना चाहता है, उसे कभी मानव-प्रेम और आसक्तियों का बोझ अपने ऊपर नहीं लादना चाहिये, क्योंकि वे उसके लिये कितनी ही बेड़ियाँ तैयार कर देते हैं और उसे प्रेम के एकमात्र चरम विषय के ऊपर अपने हृदयावेगों को एकाग्र करने के बदले अन्य दिशा में मोड़ देते हैं।

अवश्य ही चैत्य-प्रेम नामक एक चीज़ है जो शुद्ध, माँग से रहित, आत्मदान में सच्ची है, परन्तु जब मनुष्य एक-दूसरे के प्रति आसक्त होते हैं तब वह साधारणतया उतनी शुद्ध नहीं रह पाती। जब कोई साधना करता हो तब उसे इस चैत्य-प्रेम के मिथ्याभिमान से खूब सावधान रहना चाहिये। क्योंकि यह अधिकांश में किसी प्राणगत आकर्षक या आसक्ति के अधीन होने के लिये एक पर्दा और बहाना होता है। विश्व-प्रेम आध्यात्मिक होता है और वह स्थापित होता है सर्वत्र विद्यमान एकमेव अद्वितीय श्रीभगवान् के बोध पर, तथा व्यक्तिगत चेतना के आसक्ति तथा अज्ञान से मुक्त एक विशाल विश्वगत चेतना में परिवर्तित हो जाने पर।

भागवत प्रेम दो प्रकार का होता है- समस्त सृष्टि और जीवों के लिये, जो स्वयं उसी के अंग हैं; दूसरा प्रेमास्पद् भगवान् के लिये प्रेमी साधकों का प्रेम, दिव्य प्रेम। इसमें वैयक्तिक और निर्वैयक्तिक दोनों तत्व होते हैं; लेकिन इसमें जो वैयक्तिक तत्व होता है, वह सब प्रकार के निम्नतर तत्वों से अथवा प्राणगत और भौतिक सहज वृत्तियों के बन्धन से मुक्त होता है।

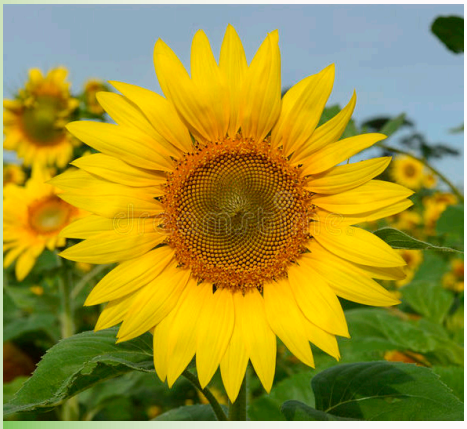

ज़ेन विचार

❖ *संसार में रहना किन्तु उसकी मिट्टी से अलिप्त रहकर – यह जेन विद्यार्थी के लिए रास्ता है।*

❖ *जब किसी का बढ़िया काम देखो तो उसके उदाहरण को अपने में उतारने के लिए प्रेरित व उत्साहित करो।*

❖ *जब किसी के बुरा काम का पता लगे तो अपने को समझाओ कि ऐसा नहीं करना।*

❖ *अँधेरे कमरे में भी हो तो ऐसे रहो कि किसी अत्यन्त सम्भ्रान्त व विशिष्ट अतिथि की उपस्थिति में हो।*

❖ *अपने भावों को प्रगट करो किन्तु अपनी सच्ची प्रकृति व स्वभाव से अधिक व्यक्त मत करो।*

❖ *गरीबी तुम्हारा ख़जाना हो। सुविधा और सुखभरे जीवन के बदले में कभी इसका विनिमय ना करो।*

❖ *कोई व्यक्ति मूर्ख लग सकता है जब कि वह वास्तव में ना हो। हो सकता है कि मूर्खता द्वारा वह अपनी बुद्धिमत्ता पर पहरा ही दिये हो।*

❖ *अपनी भावनाओं पर पूरा अधिकार रखो। उनमें बह ना जाओ।*

❖ *गुण आत्म-नियन्त्रण के फल हैं। ये आकाश से गिरा हुआ मेह या हिमपात की तरह नहीं है। इन्हें जीतना होता है, अर्जित करना होता है।*

❖ *मौन सबसे शक्तिशाली सन्देश है।*

❖ *विनम्रता – विनय सभी गुणों का आधार है। क्यों ना तुम्हारे पड़ोसी तुम्हें टोहते आयें बनिस्बत इसके कि तुम उन्हें अपनी पहचान कराओ और परिचय दो।*

❖ *एक उदात्त हृदय कभी अपने को किसी पर आरोपित नहीं करता। इससे निकलने वाले शब्द तो बेशकीमती जवाहरात होते हैं जिनका प्रदर्शन बहुत कम ही किया जाता है क्योंकि बहुमूल्य होते हैं।*

❖ *सच्चे साधक के लिए हर दिन ही भाग्यशाली दिन होता है। समय गुजरता रहता है पर वह पिछड़ता नहीं – सुस्ताता नहीं। ना ही शान और ना ही शर्म उसको चलाते हैं।*

❖ *अपना नियन्त्रण करो, दूसरों का नहीं। कभी उचित-अनुचित की बातों में ना उतरो।*

❖ *कितनी ही वस्तुएँ यद्यपि वे ठीक थीं किन्तु पुश्तों तक गलत मानी जाती रहीं, क्योंकि ठीक चीज़ को पहचानने व मानने में सदियाँ लग जाती हैं। इसलिए तत्काल तारीफ़ की इच्छा व आशा करना कोई आवश्यक नहीं।*

❖ *कारण के साथ जियो और फल को विश्व के महान कानून पर छोड़ दो। प्रत्येक दिन शान्त विचार-चिन्तन में बिताओ।*

❋

आत्मस्वरूप का साक्षात्कार

जैसे आकाश घट को अपने अन्दर धारण करता है और साथ ही मानो उसमें समाया भी रहता है वैसे ही आत्मा सब भूतों को धारण करता है और साथ ही उनमें व्याप्त भी रहता है, - भौतिक नहीं, वरन् आध्यात्मिक अर्थ में; और यही उनकी वास्तविक सत्ता है। आत्मा के इस अन्तर्व्यापी स्वरूप का हमें साक्षात्कार करना होगा; सब भूतों में अवस्थित इस आत्मा के हमें दर्शन करने होंगे और अपनी चेतना में हमें यही बन जाना होगा। अपनी बुद्धि और मानसिक संस्कारों के समस्त निरर्थक प्रतिरोध को एक ओर रखकर हमें यह जानना होगा कि भगवान इन सब व्यक्त पदार्थों में निवास कर रहे हैं और इनका सच्चा आत्मस्वरूप तथा चेतन आत्मतत्व है और यह ज्ञान हमें केवल बुद्धि से ही नहीं, बल्कि एक ऐसे आत्मानुभव से भी प्राप्त करना होगा जो हमारी मानसिक चेतना के सभी अभ्यासों को बलपूर्वक अपने दिव्यतर साँचे में ढाल देगा।

श्री अरविन्द

सावित्री

विमला गुप्ता

प्रभु का गुलाब

-डा. मंगेश नाडकर्णी की चार वार्ताओं से

जिस प्रकार अश्वपति का योग 'सावित्री 'महाकाव्य के प्रथम 24 सर्गों को प्रमुखता से समेटे हुए है वैसे ही आगे 25 सर्गों में सावित्री का शौर्यपूर्ण व्यक्तित्व चित्रित हुआ है और जिस प्रकार अश्वपति के योग के समस्त विवरण अपना सत्य और शक्ति श्री अरविन्द के योग की तपस्या से ग्रहण करते हैं, वैसे ही सावित्री के योग के समस्त चित्रण एवं वर्णन, मृत्यु से उनका संघर्ष और उस पर विजय, माताजी के आन्तरिक जीवन की तपस्या से अपना सत्य और शक्ति ग्रहण करते हैं। एक प्रकार से सावित्री महाकाव्य, अतिमानसिक युग के इन दोनों अग्रदूतों, श्री अरविन्द एवं श्री माताजी के आभ्यन्तर जीवन की महागाथा है। किन्तु साथ ही वह हम सबके जीवन की भी कथा है, जो बहुत सतर्कता एवं निकटता से मानवी जीवन को संस्पर्श करती है और उसकी विशद व्याख्या करती है। वस्तुतः श्री अरविन्द ने सावित्री सत्यवान के आख्यान द्वारा हम मनुष्यों के अन्तर्बाह्य जीवन की महत्ता का प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुतीकरण किया है। 'सत्यवान' का चरित्र हमारी उस अभीप्सा का प्रतीक है जो अनवरत प्रभु एवं प्रकाश के लिए एवं मुक्ति तथा अमरता के लिए प्रयास करती है जबकि इसके विपरीत हमारा सामान्य जीवन भाग्य, अज्ञान तथा मृत्यु की जकड़न में कसा हुआ है। 'सावित्री' वह 'दिव्य कृपा' है जो हमारे जीवन में सत्यवान रूपी इस अभीप्सा को पुनर्जीवित करने के लिए पृथ्वी पर मनुष्य की भव्य नियति 'दिव्य जीवन' को उपलब्ध करने के लिए अनवरत क्रियाशील है। इस प्रकार श्री अरविन्द का यह महाकाव्य हमारे अपने जीवन की भी कहानी है।

देवर्षि नारद सावित्री की माता को, सावित्री और उसके भाग्य के बीच आने से मना करते हैं। फिर सावित्री अपने माता-पिता का आशीर्वाद लेकर वापस वनों की पर्णकुटी में चली जाती है और सत्यवान के साथ नया जीवन शुरू करती है। सत्यवान से जुड़ जाने पर उसके जीवन का प्रत्येक क्षण, प्रत्येक स्पन्दन भरपूर आनन्द का क्षण व सुख का स्पन्दन बन जाता है। यद्यपि इस आनन्द की तह में पूर्वज्ञात भविष्यवाणी की निरन्तर टीसने वाली वह पीड़ा बनी हुई है कि सत्यवान के जीवन के इने-गिने दिन शेष रह गये हैं। सावित्री के हृदय का वह निजी दुःख उसे वैश्विक दुःख की अनुभूति के निकट ले आता है।

बहादुर और कृतसंकल्प, देवी रूपा तो भी मानवी गुणों से युक्त सावित्री असहाय सी उन बारह महीनों को कटते देख रही है जिनका क्षण-क्षण रिसता जा रहा है। अब वह क्या करेगी? कैसे अपनी मानवीय परिसीमाओं से ऊपर उठेगी? क्या हम मानवों के लिए बलवान 'भाग्य' से बचना मुश्किल है? और क्या हम अपनी नियति के सदा ही खिलौने बने रहेंगे? क्या वह भी अपने को अपने 'भाग्य-लेख' के हवाले कर दे अथवा उसमें ऐसी शक्ति है जो उसे भाग्य के इस क्रूर विधान से अपनी रक्षा के योग्य बना सके और उस पर विजय दिला सके?

जिस समय सावित्री इन प्रश्नों पर चिन्ता कर रही होती है तो उसे एक अन्तर्वाणी सुनाई देती है :-

'उठ और मृत्यु पर विजय प्राप्त कर।'

इन पंक्तियों में उस वाणी को सुनिये :-

मृत्यु से जकड़ी इस गूंगी धरती पर तू क्यों आई?
इन तटस्थ आकाशों तले, यह ज्ञानजनित मानव-जीवन
एक बलि पशु के समान है जो बँधा हुआ है 'काल' के खम्बे से।
ओ आत्मा! ओ अमर शक्ति!
क्या बेबस हृदय में दुःख को पोषित करने के लिए तू आई है?
क्या नीरस शुष्क आँखों से दुर्भाग्य की प्रतीक्षा के लिए हुआ है तेरा आगमन?
उठ ओ आत्मा! काल और मृत्यु को परास्त कर।

(पर्व 7, सर्ग 2, पृष्ठ 474)

अन्तरात्मा की यही वाणी सावित्री को बताती है कि उसके जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है :-

पृथ्वी को स्वर्ग के समकक्ष उठने के लिए स्वयं करना होगा अपना रूपान्तर
अथवा स्वर्ग को उतरना होगा पृथ्वी के धरातल पर
और इस विशाल आध्यात्मिक परिवर्तन को सम्भव करने हेतु,
मानव हृदय की 'रहस्यमयी गुफा' में वास करती,
स्वर्गिक 'चैत्य सत्ता' को उठाने होंगे अपने स्वरूप पर पड़े आवरण,
उसे अपने कदम रखने होंगे साधारण जीवन के संकुल कक्षों में
और अनावरण आना होगा प्रकृति के अग्रभाग में
परिपूर्ण एवं अनुशासित करना होगा, इसके जीवन, शरीर एवं विचारों को।

(पर्व 7, सर्ग 2, पृष्ठ 486-87)

सावित्री का जन्म एक 'वैश्विक इच्छा' के फलस्वरूप हुआ था। उसे अज्ञान और मृत्यु पर विजय पाने के लिए जन्म-कक्ष में उतरना पड़ा था ताकि वह पृथ्वी से इनको मिटा सके। अपने अवतरण के हेतु को साधने के लिए उसे जिस तीक्ष्ण समस्या का सामना करना पड़ता है वह है- अपने पति की भाग्य द्वारा निर्धारित पूर्वनियत मृत्यु। अभी तक मनुष्य की कोई भी शक्ति और उसके हृदय, मन, विचार और संकल्प का कोई भी प्रयास इस समस्या का हल ढूंढने में समर्थ नहीं हो पाया है। अतः निश्चय ही इन सबसे परे मनुष्य की वास्तविक शक्ति कहीं और निहित है और वह शक्ति है उसका दिव्य अशं 'चैत्य पुरूष' (psychic Being)। अपने अन्तरात्मा के निवासी इस दिव्य अंश को उसे सक्रिय बनाना होगा, अपनी प्रकृति के अग्रभाग में लाना होगा और उसके द्वारा ही अपने जीवन की प्रत्येक गतिविधि को संचालित एवं नियंत्रित करना होगा। केवल तभी मनुष्य 'मृत्यु' और 'अज्ञान' पर विजय पा सकता है। इस सच्चाई को जानकर सावित्री अपने अंदर की ओर उन्मुख हो जाती है। यहाँ 'आत्मा की खोज' शीर्षक से 'सावित्री' के योग का वर्णन हुआ है और करीब सात सर्गों में इसे प्रस्तुत किया गया है जिसमें पर्व सात के लगभग पचास पन्ने हैं।

मूल महाभारत कथा में सावित्री 'त्रिरात्र' व्रत लेती हैं। यह व्रत तीन दिन, तीन रात अपने को शुद्ध करने की तपश्चर्या का व्रत है। और वह सतीत्व की शक्ति को अपने अन्दर जागृत करने का संकल्प करती है। श्री अरविन्द के 'सावित्री' महाकाव्य में कथा के इस प्रसंग को भी विस्तार से प्रतिपादित किया गया है और सावित्री का योग भी बड़े उत्कृष्ट एवं शोभनीय तरीके से विकसित होते दर्शाया गया है तथा अन्तरात्मिक धरातल पर उसका योग पूर्ण विकास को प्राप्त करता है लेकिन सावित्री जो मार्ग चुनती है वह अश्वपति के मार्ग से अलग है।

प्रारम्भ में वह प्राण एवं मन के प्रदेशों से होकर यात्रा करती है। तब वह एक ऐसे क्षेत्र में आती है जहां उसकी भेंट तीन मातृरूपा शक्तियों

(Three Madonna's) से होती है। ये तीनों प्रभु की वे वैश्विक दिव्य शक्तियाँ हैं जो सदा से ही मनुष्य जीवन में सक्रिय है। उनमें से पहली माता 'प्रेम एवं सहानुभूति' की देवी है, दूसरी 'शौर्य एवं पराक्रम' की शक्ति है तथा तीसरी 'प्रकाश एवं प्रज्ञा' की माता है। ये तीनों दैवी शक्तियाँ सावित्री की असली 'माता' होने का दावा करती है। सर्वाधिक ध्यान देने लायक बात यह है कि तीनों ही शक्तियों का एक आसुरिक विकृत रूप भी है जो मानव प्रकृति में अनवरत कार्य कर रहा है वह भी सावित्री से सम्भाषण करता है। सावित्री की इन तीनों वैश्विक शक्तियों एवं उनके विकृत आसुरिक रूपों से भेंट की घटना मानव जीवन के इतिहास का एक और क्षितिज प्रकट कर देती है। विश्व के इतिहास में महान् प्रेममयी और दयालु जीवात्माओं की विद्यमानता सदा बनी रहती है। इन्होंने पृथ्वी से सभी दुःख, क्लेश एवं शोक नष्ट करने के बड़े-बड़े प्रयास किये हैं। यद्यपि वे कुछ मनुष्यों के आँखों के आँसू पोंछने में सफल भी हुईं, लेकिन पृथ्वी से ये सब रोग, शोक, पीड़ाएँ कभी पूरी तरह नष्ट नहीं हो पाये। यही हश्र शौर्य एवं पराक्रम की शक्ति का भी होता रहा है। आज मनुष्य के पास विज्ञान द्वारा दी गई असीम शक्ति है जिसका प्रयोग करने से वह भूख एवं रोग इस धरती के सीने से दूर कर सकता है। लेकिन क्या कहीं भी वह ऐसा करता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है? मानवता ने अत्यंत प्रबुद्ध, उच्च आदर्शयुक्त संत-महात्माओं को भी देखा है। उनकी प्रेरणा, आग्रह एवं उपदेशों ने कुछ मनुष्यों के जीवन को सान्त्वना और श्रेष्ठता भी प्रदान की है व उन्हें भगवद्-प्राप्ति की राह पर ले जाकर उद्धार भी किया है। लेकिन पूरी मानवता के लिए क्या उपाय है? क्या वह अभी तक मृत्यु और अज्ञान के चंगुल में नहीं फँसी हुई है?

अतः सावित्री उन तीनों दैवी शक्तियों में से हर एक से कहती है कि वह उसकी आत्मा का एक अंश रूप है जिसे मानवता की सहायता के लिए रखा गया है। मनुष्य ने इन दैवी शक्तियों के कारण ही वह सब कुछ प्राप्त किया है जो सभ्यता एवं संस्कृति द्वारा पाया जा सकता है। वे शक्तियां पूर्ण-रूपेण सामर्थ्यवान नहीं हैं और इसलिए वे मनुष्यों को भी पूर्ण सामर्थ्य और मुक्ति नहीं दे सकीं हैं। इस महान् कार्य को सम्पन्न करने के लिए कुछ और अन्य शक्तियों की भी आवश्यकता है, यद्यपि ये दैवी शक्तियाँ पृथ्वी-जीवन की परिपूर्णता के लिए मनुष्य के शौर्यपूर्ण किन्तु निष्फल संघर्ष के कुछ पक्षों को सामने ला पाई हैं। उनके विकृत रूप हमें आसुरिक ताकतों के बारे में स्पष्ट करते हैं कि कैसे उन्होंने मानवी विकास-क्रम की सीढ़ी चढ़ते पाँवों को नीचे खींचा है और उनका विरोध किया है। इनका हर विकृत रूप दम्भ और हीनता के रेशम पहने कुटिल मजे ले रहा है। इस शैतान की बनावटी बातें सुनिये जो प्रेम और सहानुभूति का विकृत रूप हैं :-

मैं दुःख पुरूष हूँ, मैं वह क्रम हूँ
जिसे जगत् के विशाल क्रॉस पर कीलें ठोंक दी गई;
मेरे दुःखों का आनन्द लेने के लिए भगवान् ने यह सृष्टि रची,
मेरे भावावेगों को उसने बनाया अपने नाटक का कथानक।...
अपने इस निष्ठुर संसार में उसने मुझे भेज दिया नग्न करके,
और फिर मुझे पीटा दुःख और पीड़ा की छड़ों से
ताकि मैं उसके कदमों पर गिरकर रोऊँ और गिड़गिड़ाऊँ...
और अपने रक्त और आँसुओं से उसकी पूजा कर अर्घ्य चढ़ा दूँ।

मैं पशु की तरह श्रम करता हूँ और उसी की तरह मर जाता हूँ,
मैं विद्रोही हूँ, साथ ही असहाय क्रीत दास हूँ,
मेरे भाग्य और मित्रों ने मुझे सदा ठगा है,
मैं शैतानी दुष्टताओं का एक शिकार हूँ,
मैं कर्ता हूँ आसुरिक कार्रवाइयों का,
मैं 'अनिष्ट' के हेतु सृजा गया था, वही मेरे भाग्य में है
मैं 'अशुभ' हूँ और वही बनकर जीऊँगा।

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 505,507)

क्या यह प्रलाप हमें वर्तमान समय के उन क्रान्तिकारियों के कृत्रिम वचनों व वक्तव्यों की याद नहीं दिलाता जिन्होंने भगवान् को तो निर्वासित कर दिया है और जो न्याय एवं समानता के नाम पर हिंसा और विनाश सिखा रहे हैं। ये क्रान्ति के दावेदार अपना मिशन प्रेम और सहानुभूति से शुरू करते हैं लेकिन अन्ततः उनके कथन घृणा और कटुता में बदल जाते हैं। कारण, ये किसी भी स्तर पर आध्यात्मिक धरातल और धारणा से शून्य होते हैं। अब आप शक्ति और सौंदर्य के विकृत रूप असुर की शेखी सुनिये जो यह सोचता है कि उसका काम भगवान् और प्रकृति के कार्यों में सुधार करना है :-

मैं प्रकृति से अधिक महान् हूँ, भगवान् से अधिक बुद्धिमान हूँ,
मैंने उन सब वस्तुओं को यथार्थ रूप दिया जिसका उसने स्वप्न भी नहीं देखा,
मैंने उसकी शक्तियों को कब्जे में कर उनका अपने उद्देश्य के लिए प्रयोग किया,
मैंने उसकी धातुओं को नए रूपों में ढाला, नई धातुएं बनाई,
मैं दूध से शीशे और वस्त्रालंकार बनाऊँगा
लोहे से मखमल और पानी से पत्थर बनाऊँगा,
ऐसा कोई चमत्कार नहीं जिसे मैं नहीं सकूँगा घटित
भगवान् ने जो कुछ अधूरा बनाया, उसे मैं पूरा करूँगा
जटिल मन और अर्धनिर्मित आत्मा से बाहर निकल
उसके पाप और भूलें मैं मिटा दूँगा
जो वह नहीं कर पाया उसे मैं सृजूंगा
वह पहला सृष्टा था, मैं अन्तिम सृष्टा हूँ

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 512)

ये शब्द हमें उस दम्भी और नास्तिक वैज्ञानिक की याद दिलाते हैं जो सुन्दर धरती को आणविक शक्ति केन्द्रों और न्यूक्लीयर मिसाइल्स से अलंकृत करने में व्यस्त बना हुआ है और अपने को आखिरी सृष्टा मानता है। लेकिन वर्तमान हालातों को देखकर हम सभी को ऐसा प्रतीत होता है कि वह पृथ्वी को केवल एक कब्रगाह ही बनाने में सफल होने जा रहा है। आगे इस असुर की बातें सुनिये जो आत्मा और भगवान् में विश्वास नहीं करता है :-

मैं मानव हूँ, मुझे मानव ही रहने दो
जब तक मैं, अचित् में ना गिर जाऊँ, मूक और निद्रित ना हो जाऊँ
यह सोचना कि प्रभु छिपा रहता है इस मिट्टी के पुतले में
कि 'शाश्वत सत्य यह काल' में अनुबन्धित रह सकता है
उसे अपनी रक्षा और विश्व के परित्राण हेतु पुकारना
है केवल एक कपोल-कल्पना और बहुत बड़ी नादानी
मनुष्य कैसे अमर हो सकता है, दिव्य बन सकता है?
कैसे उस मूल उपादान को रुपान्तरित कर सकता है जिससे वह बना है?
इसका सपना देख सकते हैं वे मायावी देवगण, विचारशील मनुष्य नहीं।

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 520)

उसका यह कथन हमें एक समझदार और उदार मानवतावादी की याद दिलाता है। वह बुद्धिमान, नैतिक चरित्र वाला और नेक भावनाओं वाला है। लेकिन वह जीवन के आध्यात्मिक आयामों को और मनुष्य की

आध्यात्मिक नियति को अस्वीकार कर देता है। अतः उसके समस्त सुधार और परिवर्तन अन्त में गलत और भ्रान्त अभियान की तरह समाप्त हो जाते हैं। ये विकृत आसुरिक रूप और इनकी ताकतें, प्रेम, प्रज्ञा और दिव्य शक्तियों की अपेक्षा तनिक भी कम सक्रिय नहीं हैं। वे अनवरत जीवन प्रभावी हैं। सावित्री उन सब शक्तियों की बातें सुनती है और उत्तर में कहती है कि केवल मानवी देह में प्रभु का अवतरण ही प्रेम-शक्ति और प्रकाश की क्रियाओं को समन्वित तथा सुदृढ़ कर सकता है और 'अहंकार' का प्रभु में विलय कर सकता है। यह बात वह प्रकाश की देवी से कहती है :-

एक दिन मैं लौटूंगी, 'उसका' हाथ होगा मेरे हाथ में
तब तुम देखोगी उस 'परम प्रभु' के मुख की शोभा को
तब वह शुभ परिणय-बन्धन होगा सम्पादित
और तब यहाँ दिव्य परिवार का जन्म होगा
और समस्त धरा जीवन में प्रकाश और शान्ति का वास होगा।

(पर्व 7, सर्ग 4, 421)

उदारता

एक दिन अरविन्द अपनी माँ या बहिन को भेजने के लिये एक धनादेश (मनिआर्डर) भर रहे थे। कुछ दिनों से मैं अपने घर कुछ रूपये भेजने की सोच रहा था किन्तु यह सोच कर माँगने से हिचकता था कि पता नहीं उनके पास पर्याप्त रुपये होंगे या नहीं। मैंने सोचा यह रुपये माँगने का एक सुअवसर है। मैंने रुपये माँगे। अरविन्द मुस्कराये और एक बक्स से एक छोटी थैली निकाली। उन्होंने उसमें जो थोड़ा-बहुत रुपया था निकाल कर मुझे दिया और कहा, "मेरे पास बस इतना ही है, तुम इसे भेज दो।" मैंने उत्तर दिया, "आपका क्या तात्पर्य है? आप अभी एक धनादेश भर रहे थे जिससे कि आप रुपये भेज सकें। आप भेज दीजिये। मैं बाद में भेज दूँगा।" अरविन्द ने सिर हिला कर कहा, "नहीं, यह उचित नहीं है। तुम्हारी आवश्यकता मुझसे अधिक है। मैं बाद में भेजूँ तो कुछ अन्तर नहीं पडेगा।"

हम इतिहास में या उपन्यासों में ऐसे महात्माओं तथा उदार व्यक्तियों के विषय में पढ़ते हैं जो दूसरों की आवश्यकताओं को अपनी आवश्यकताओं से अधिक महत्व देते हैं। किन्तु मैं नहीं सोचता कि इन दिनों और इस युग में मैंने उनके अतिरिक्त इसका कोई वास्तविक उदाहरण देखा हो।

उपले बेचने वाली पर श्री अरविन्द की कृपा

श्याम कुमारी

यह घटना श्री अरविन्द के बड़ौदा निवास के समय की है। प्रभात बेला थी। अंधकार अभी तक पूर्ण रूप से लुप्त नहीं हुआ था। उस दिन बड़ौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड़ अपने घोड़े पर सवार होकर अकेले ही भ्रमण के लिये निकले। साथ में कोई अंगरक्षक नहीं था। महाराज सयाजीराव ने उस दिन अपने राजसी वस्त्रों के स्थान पर सामान्य वस्त्र पहन रखे थे। श्री अरविन्द भी पैदल घूमने निकले थे। वे महाराजा के कुछ पीछे थे।

उस प्रभात बेला में सड़क पर अन्य कोई व्यक्ति नहीं था। महाराजा ने सड़क पर एक वृद्धा को खड़े देखा। उसके पास उपलों की एक टोकरी रखी थी। वह बुढ़िया इस आशा से इधर-उधर देख रही थी कि कोई राहगीर उसकी उपलों की टोकरी उसके सिर पर रखवा दे। एक घुड़सवार को आते देख कर बुढ़िया ने पुकारा, "अरे भाई, कृपा करके अपने घोड़े से उतर कर यह टोकरी मेरे सिर पर रख दो। माफ़ करना मैं तुम्हें तकलीफ़ दे रही हूँ। पर मैं क्या करूँ? अब मैं बूढ़ी हो गयी हूँ और पहले जितनी ताकत नहीं रही। अब मुझे गुज़ारा करने के लिये दूसरों की सहायता पर निर्भर करना पड़ता है।" महाराज घोड़े से उतरे और उपलों की टोकरी उठा कर वृद्धा के सिर पर रख दी। बुढ़िया ने कृतज्ञता से कहा, "भाई, बहुत-बहुत धन्यवाद। भगवान् तुम्हें लंबी उम्र दें। तुम पर और तुम्हारे परिवार पर हमेशा लक्ष्मी की कृपा रहे। भगवान् का आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहे।" उपलों की टोकरी को अपने सिर पर रख कर बुढ़िया धीरे-धीरे अपने रास्ते चल दी। बेचारी बुढ़िया! आजीविका के लिय वह गोबर इकट्ठा करके उपले बनाती थी और उन्हें सुखा कर बेचती थी। वह सपने में भी कल्पना नहीं कर सकती थी कि स्वयं बड़ौदा महाराज ने उसके सिर पर उपलों की टोकरी रखी थी।

महाराजा अपने घोड़े पर चढ़ने ही वाले थे कि उन्होंने श्री अरविन्द को आते हुए देखा। वे रुक कर उनके आने की प्रतीक्षा करने लगे। यद्यपि श्री अरविन्द उनके सेक्रेटरी थे किन्तु महाराजा उन्हें अपना प्रिय मित्र मानते थे और उनसे मिल कर सदैव प्रसन्न होते थे। श्री अरविन्द ने मुस्करा कर महाराजा को नमस्कार किया, महाराजा को प्रतीत हुआ कि श्री अरविन्द की मुस्कान में कोई गुप्त अर्थ निहित है। उन्होंने पूछा, "मिस्टर घोष, आप क्यों मुस्कराये?" श्री अरविन्द ने मुस्करा कर उत्तर दिया, "कोई विशेष कारण नहीं।" महाराजा जानते थे कि श्री अरविन्द अकारण हँसते या मुस्कराते नहीं थे। अवश्य ही कोई कारण होगा। उन्होंने कहा, "बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव एक गरीब बुढ़िया के सिर पर उपलों की टोकरी रख रहे थे – क्या आप इसलिये मुस्कराये?" श्री अरविन्द ने कहा, "नहीं, यह कारण नहीं था। तब क्या कारण था?"

श्री अरविन्द ने उत्तर दिया, "महाराज, आपने एक बुढ़िया के उपलों की टोकरी उठा कर उसके सिर पर रख कर उसकी सहायता की। निस्संदेह, यह एक अच्छा कार्य था। किन्तु मैं आश्चर्य कर रहा था कि महाराजा बड़ौदा श्री सयाजीराव के लिये वास्तव में एक महान् कार्य क्या होगा? उपलों की एक टोकरी एक बुढ़िया के सिर पर रखना या उसे ऐसा भार उठाने की आवश्यकता से मुक्त कर देना?"

सयाजीराव श्री अरविन्द के शब्दों का महत्व समझ गये। उन्होंने तुरंत अपना घोड़ा उस ओर दौड़ाया जिस ओर बुढ़िया गयी थी। वे शीघ्र ही उसके पास पहुँच गये और उसका नाम-पता पूछा। अगले दिन महाराजा ने एक अधिकारी को भेज कर उस बुढ़िया को दरबार में बुलवाया। दरबार में बुलाये जाने से बुढ़िया बहुत भयभीत थी। जब उसने देखा कि जिस व्यक्ति ने टोकरा उठवाने में उसकी सहायता की थी वह सिंहासन पर बैठा है, तब तो वह भय से काँपने लगी।

महाराजा ने प्रेम और कोमलता भरे स्वर में अपने पास बुलाया और उसको आश्वस्त किया। उन्होंने उसके रहने के लिये एक पक्का घर बनवा दिया और आजीवन उसके व्यय का पूरा भार उठा लिया। यह करने के बाद महाराजा श्री अरविन्द से मिले तो उन्होंने अपने प्रिय मित्र को यह सब देते हुए कहा, "यह कार्य आपके अनुरूप था। सयाजीराव को भी आन्तरिक प्रसन्नता हुई। इस प्रकार श्री अरविन्द की कृपा से उपले बेचने वाली एक गरीब औरत एक राजा की मुँहबोली बहन बन गयी।"

दो पैसे का स्कूल

बाबा कैलाशनाथ 'त्यागी' ने 65 वर्ष की आयु में सन्यास ग्रहण किया और काशी चले गये। वहाँ एक वर्ष रहकर वे अपने सारन जिले में लौट आये। अपने जन्म स्थान बड़ागाँव में उन्होंने देवी का मन्दिर बनवाने का संकल्प किया और उसके लिये एक-एक पैसा प्रति व्यक्ति एकत्र करने लगे। गाँव-गाँव, नगर-नगर घूमकर उन्होंने छह हजार रूपये एकत्रित किये और सन् 1957 में मन्दिर बनवाकर अपना संकल्प पूरा किया। यह मन्दिर एक पैसेवाला मन्दिर कहलाता है।

एक दिन गाँव के कुछ व्यक्ति कह रहे थे कि बाबा ने मन्दिर बनवाकर सारा पैसा पानी में बहा दिया। क्या अच्छा होता यदि वे इस रूपये में स्कूल ही स्थापित कर देते।

यह बात बाबा के पास पहुँच गयी। उन्होंने फिर संकल्प किया कि वे गाँव में एक औद्योगिक पाठशाला स्थापित करायेंगे। इसके लिये उन्होंने दो पैसे प्रति व्यक्ति के हिसाब से चन्दा एकत्रित करना प्रारम्भ किया। चन्दे से शीघ्र ही उनके पास एक लाख रूपये की धनराशि एकत्रित हो गयी। इस धनराशि से 'दो पैसेवाला सार्वजनिक औद्योगिक विद्यालय' स्थापित हो गया। आज इसमें तीन सौ से भी अधिक छात्र विद्याध्ययन कर रहे हैं। बाबा ने बूँद-बूँद से घड़ा भरता है कहावत चरितार्थ करते हुए लोक-कल्याण का कार्य पूरा किया। बाबा का त्याग व सेवा कार्य प्रेरक है।

-श्याम मनोहर व्यास

प्रेरणायें

प्रिय तारा दीदी,

हमने केचला में बहुत सुन्दर समय बिताया पर आपकी कमी बहुत अखरी। वहाँ चल रहे कार्यों को देखकर हृदय बहुत गदगद हो गया। प्रांजल भैया का कार्य आश्चर्यजनक व अविश्वसनीय है। केचला को हम बंजर भूमि के मध्य एक छोटे सा स्वर्ग कह सकते हैं।

हमारे परिवार को वहाँ बुलाने के लिये एक बार फिर धन्यवाद। हम बहुत आभारी हैं और यह सब बहुत प्रेरक था। हम वहाँ अपना एक ग्रुप ले जाने और अपने विचारों को श्रीमाँ की प्रेरणा से सार्थक बनाने की दिशा में पिछले वर्ष की भाँति ही कुछ कार्य करना चाहेगें।

हमें खुशी है कि हमने लता दीदी के फार्म पर कुछ समय बिताया और आपसे भी मिल पाये।

हमें केचला दिखाने के लिये एक बार फिर धन्यवाद!

बहुत बहुत प्रेम सहित

कौरोनी

***

ओम् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेणयं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्

कार्या0 पोस्ट मैट्रिक अनुसूचित जाति बालक छात्रावास बुरहानपुर (म. प्र.) 450331

दिनांक – 07-02-2018

प्रति-

परम आदरणीय सम्पादक महोदय,

श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा, अरविन्द मार्ग नई दिल्ली 110016

संदर्भः आपका पत्र दिनांक 27-07-2017

मान्यवर जी, आपको सम्पादक मंडल सहित सहर्ष कोटिष् सादर प्रणाम। "श्री अरविन्द कर्मधारा" मासिक पत्रिका के स्थान पर वार्षिक चार दर्शन दिवसों पर निकलना प्रारंभ हो गयी है। उक्त पत्रिका दिव्य, अनूठी, बेजोड़, सारगभित, सरल, सराहनीय, संग्रहलायक व प्रेरणादायी है जो हमारे निराश्रित हरिजन आदिवासी छात्रावासी छात्रों हेतु पूर्व में निःशुल्क मिलती रही। यह आध्यात्म पूँजी की धरोहर है।

'श्री अरविन्द कर्मधारा'

अ–अति हर्षित रहना है तो लो ओम् नाम।

र–रग-रग में ऋषि अरविन्द का समाया हो निष्काम॥

वि–विश्व की विकृति दूर करे श्रीमाँ के विचारों पर हो ध्यान।

न्–नवसृजन करो धरा पर सुबह शाम जपो भगवान॥

द–दमन करो इंद्रियों का, मन एकाग्रता में है शान।

क–कर्मश्रेष्ठ का पाठ पढ़ा हो, आत्मज्ञान है महान॥

र्–रक्त की हर बूँद देश के काम आये सुबह शाम।

म–मन, तन, धन दिव्य हो सबके, करे कर्म धर्म निष्काम॥

धा–धारणा बनी रहे प्रभु सुमरण की सदैव।

रा–राष्ट्र नव निर्माण करे, यशी जीवन हो सदैव ॥

हमारे सभी छात्र निर्धन निराश्रित हैं जो शुल्क देने से असमर्थ है। आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि उक्त पत्रिका की एक प्रति निःशुल्क छात्रावास हेतु प्रदान कराने की कृपा करे। आज ही उक्त संदर्भ में पत्र प्राप्त हुआ है।

पते के साथ पुत्र का ऑनलाइन पता भेज रहा हूँ।

सुन्दरलाल प्रह्लाद चौधरी – अधीक्षक पोस्ट मैट्रिक अनुसूचित जाति

बासक छात्रावास बुरहानपुर (म.प्र,) 450331 (द्वारा)

jaychoudhrylic@gmail.com

***

आदरणीय दीदी,

आश्रम में हमारा निवास अत्यन्त सुखद शिक्षाप्रद और मनोरंजक रहा। माँ की कृपा से हमारी वापसी की यात्रा भी ठीक प्रकार हो गयी यद्यपि मीतू दिल्ली एयरपोर्ट की अन्तिम सीढ़ी के किनारे पर गिर गयी लेकिन माँ ने उसे कुछ गम्भीर चोट लगने से बचा लिया। वो अब ठीक है और घर के कार्यों में सहायता कर रही है। दीदी आप अपना ध्यान रखिये हम आपको बहुत याद करते हैं। हमने अभी से निकट भविष्य में एक दूसरी वर्कशॉप के लिये भी योजना बनानी आरम्भ कर दी है। सभी आश्रम के भाइयों और बहनों को जिन्होंने हमारे आवास को आरामदेय और यादगार बनाया हमारा बहुत-बहुत प्यार और शुभकामनायें।

आपके वरुण और मीतू

***

प्रिय तारा,

औरोविल में 88 दान दाताओं द्वारा भूमि अधिग्रहण के अनुदान की 26 लाख राशि के लिए हम तारा दीदी ग्रुप अनुदान दाताओं का हृदय से धन्यवाद करते हैं। सभी दान दाताओं के नाम व अनुदान का लेखा देखते हुए उनकी भक्ति के प्रति मेरा हृदय सबके प्रति शुभकामनाओं से भर गया। एक बार फिर सबको बहुत-बहुत धन्यवाद।

अत्यन्त प्रेम सहित

मन्दाकिनी रे

आत्मरक्षा की कक्षायें

6 मार्च 2018 से 11 मार्च 2018: दिल्ली आश्रम द्वारा आश्रम के लड़के व लड़कियों के लिये तीन दिवसीय 'Self Defense' की कक्षाएँ आयोजित की गयी जिसमें उन्हें अपनी सुरक्षा के तरीके सिखाये गये जैसे- पंचिंग, ब्लौक करना और खतरे के समय आक्रमण करना आदि जिनके द्वारा बिना किसी शस्त्र के भी हम विपत्ति के समय अपना बचाव कर सकते हैं। सभी ने बहुत उत्साह पूर्वक भाग लिया। वर्कशॉप अत्यन्त सामयिक व उपयोगी रही। बाद में दिल्ली पुलिस डी0 सी0 पी0 द्वारा सबको प्रमाण पत्र भी वितरित किये गये।

दिल्ली पुलिस डी0 सी0 पी0 प्रमाण पत्र वितरित करते हुये।

आश्रम में पिछली तिमाही के कार्यक्रम

21 फरवरी 2018: श्रीमाँ का 140वाँ जन्मदिन मनाया गया। इस दिन प्रातः 5:30 समाधि उद्यान से प्रभात फेरी शुरू की गयी जिसमे श्रीमाँ व श्री अरविन्द जी के भजन गाये गये। श्रीला दीदी द्वारा ध्यान कक्ष में मंगलाचरण और 8:30 समाधि में पुष्पांजलि के बाद 9:30 हॉल ऑफ ग्रेस में 'द मदर इंटरनेशनल' के विद्यार्थियों द्वारा भक्ति गीत प्रस्तुत किये गये।

3:45 'द मदर इंटरनेशनल' स्कूल के प्ले ग्राउंड में आश्रम के बच्चों द्वारा Physical demonstration किया गया। 6:15 समाधि उद्यान में 'मार्च पास्ट' 'अभीप्सा की ज्योति' (Lights Of Aspiration) व 6:30 ध्यान कक्ष में तारा दीदी द्वारा 'Four Aspects of The Mother' का पाठ और आश्रम के गायकों द्वारा भजन प्रस्तुति व 7:40 प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम की समाप्ति हुयी।

28 फरवरी 2018: श्री अनिल कुमार की 4th पुण्यतिथि, जिसमें 6:30 से 7:30 ध्यान कक्ष में श्री शिव प्रसाद राव द्वारा संगीत प्रस्तुति की गयी तथा प्रसाद वितरण।

20 मार्च 2018: करुणा दीदी के आश्रम आने के उपलक्ष में ध्यान कक्ष में शाम 6:45 पं0 बरुन पाल जी ने हंस वीणा वादन प्रस्तुत किया। 7:50 प्रसाद वितरण।

23 मार्च 2018: स्वरगंगा- करूणा दीदी के जन्मदिन के उपलक्ष शाम 6:45 ध्यान कक्ष में श्री उदय कुमार मल्लिक जी ने 'ध्रुपद' जुगलबन्दी गायन तथा डॉ0 रंजन कुमार जी ने वायलिन प्रस्तुत किया। उसके पश्चात प्रसाद वितरण किया गया।

24 मार्च 2018: संगीत समारोह- करूणा दीदी का 88th जन्मदिन। संध्या 6:45 से 7:45 ध्यान कक्ष में पंडित मधुपल मुडगल द्वारा वोकल संगीत प्रस्तुत किया गया।

25 मार्च 2018: तीसरा दिन- स्वरगंगा- संगीत समारोह- इस दिन शाम 6:45 से 7:45 ध्यान कक्ष में विदुषी नलिनि जोशी द्वारा वोकल संगीत प्रस्तुत किया गया। उसके पश्चात प्रसाद वितरण किया गया।

26 मार्च 2018- संध्या 7 बजे ध्यान कक्ष में आषीश सरकार द्वारा बाउल (Baul) संगीत प्रस्तुत किया गया। की-बोर्ड पर उनका साथ रमनलाल जी और तबले पर मो0 फ़राज़ ख़ान द्वारा दिया गया।

29 मार्च 2018- श्री माँ के पांडिचेरी पहुँचने की 104वीं वर्षगाँठ का अवसर इस दिन प्रातः 7 बजे ध्यान कक्ष में श्रीला दीदी द्वारा मंगलाचरण, सायं 6:15 समाधि उद्यान में 'अभीप्सा की ज्योति' (Lights of Aspiration) तथा संध्या 6:30 से 7:30 विदुषी

नलिनी घानेकर द्वारा आत्मिक संगीत की प्रस्तुति से मनाया गया। यह वही दिन था जिस दिन वर्ष 1914 में हमारी दिव्य माँ की श्री अरविन्द से भेंट हुई थी।

28 मार्च 2018 को ग्नोस्टिक सैन्टर ने अपना 21वाँ स्थापना दिवस और श्री अरविन्द रैलिक्स की 11वीं वर्षगाँठ मनाई। संध्या का प्रारंभ डॉ. सम्पदानन्द मिश्रा जी अत्यन्त रुचिकर अंर्तदृष्टिकोण और विचारगम्य वार्ता से हुआ जिसमें उन्होंने श्रीमाँ के चार शक्तियों का और बारह विशेषताओं का वर्णन किया। वार्ता में निष्ठा, कृतज्ञता, नम्रता, अध्यव्यवसाय के गुणों पर और श्रीमाँ कीअन्य आठ विशेषताओं पर भी संक्षेप में प्रकाश डाला गया।

वार्ता लगभग 90 मिनट तक चली जिसके उपरान्त तारा दीदी ने श्रीमाँ की बारह विशेषताओं से सम्बन्धित पुष्प प्रदर्शिनी का उद्घाटन किया और अपने विशिष्ट सहज और सौहार्दपूर्ण तरीके से श्रीमाँ के बहुमूल्य किस्सों के बारे में बताया। ध्यान कक्ष में सामूहिक ध्यान के साथ संध्या की समाप्ति हुई।

4 अप्रैल 2018- श्री अरविन्द जी के पाण्डिचेरी आने के 108 वर्ष तथा तपस्या भवन की 27 वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष में श्रीला दीदी द्वारा प्रातः 7 बजे ध्यान कक्ष में मंगलाचरण और संध्या 6:30 से 7:30 बजे तक तपस्या के आँगन में श्रीमति स्वाति श्रीनिवास द्वारा सूफ़ियाना गज़ल 'रस बरसे' प्रस्तुत की गयीं। ईश्वर की भक्ति से सरोबार गज़लों ने सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। अन्त में प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम की समाप्ति हुई।

आश्रम में चौथी कक्षा के बच्चों का कैंप

24 फरवरी 2018: चौथी कक्षा के बच्चों का श्री अरविन्द आश्रम में कैंप आयोजित किया गया जिसमें उनको विभिन्न जीवन कौशल सिखाये गये। कक्षा को पाँच ग्रुप में बाँट दिया गया। दिन का प्रारंभ हल्के व्यायाम और रूचिपूर्ण खेलों से हुआ। उसके बाद उनको आश्रम में अनेक कार्य जैसे- आर्ट, हस्तनिर्मित कागज, मिट्टी से बनी आकार, बागवानी, श्री अरविन्द समाधि ध्यान कक्ष और श्रीस्मृति दिखाया गया।

उनको पत्तल और दोनों में अल्पाहार और दिन का भोजन परोसा गया जो उनके लिये एक नया अनुभव था। योगनिद्रा और ध्यान ने उनको अपने अन्दर देखने और अंतर्मुखी बनने में सहायता प्रदान किया। पूरा कैंप बच्चों के लिए बहुत अच्छा अनुभव देने वाला और उनके सर्वांगीण विकास में सहायक रहा।

श्री अरविन्द आश्रम में चौथी कक्षा बच्चों के लिये आयोजित कैंप-हल्के व्यायाम और रूचिपूर्ण खेलों के साथ दिन का प्रारंभ

आश्रम गैलेरी

आश्रम की तरफ से यमुना बायो डायवर्सिटि पार्क पर्यवेक्षण

आश्रम के सिलाई केन्द्र में वोकेशनल प्रशिक्षार्थियों द्वारा बनाये गये वस्त्रों की प्रदर्शिनी

तारा दीदी हैदराबाद अदिति गुरुकुल स्कूल के बच्चों व कार्यकर्ताओं से बातचीत करते हुए

आत्मरक्षा वर्कशॉप

आश्रम परिसर दिल्ली में सिलाई प्रशिक्षण

श्रीअरविंद आश्रम परिसर दिल्ली में सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र है जहाँ प्रशिक्षण के लिए आये प्रशिक्षार्थियों को छः माह का सिलाई प्रशिक्षण दिया जाता है। 21-03-2018 को आश्रम परिसर में सिलाई केन्द्र में प्रशिक्षण के लिए आयी प्रशिक्षार्थियों के द्वारा सिले कपड़ों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। उनके द्वारा बनाये गये कपड़े बहुत ही सुन्दर और सफाई के साथ बने थे। पूरी टीम ने बहुत ही मेहनत और कड़े परिश्रम से कपड़े बनाये थे और उनकी मेहनत उनके काम में दिख रही थी।

प्रदर्शनी को देखने सुश्री तारा दीदी भी आयीं थीं, उनके साथ श्रीमती विजया दीदी ने भी प्रदर्शनी को देखा। तारा दीदी ने बच्चों के कार्य की बहुत सराहना की एवं उनको प्रोत्साहन भी दिया कि आगे भी अपने इस कार्य को जारी रखें। विजया दीदी ने कहा कि आश्रम परिसर से जाने के बाद भी अपनी कला को जीवित रखें और सिलाई के कार्य को करते रहें।

आश्रम परिसर में रहने वाले आश्रमवासी, अन्य प्रशिक्षार्थी, बाहर से आये मेहमानों ने भी प्रदर्शनी का अवलोकन किया। सभी ने सिलाई की बहुत सराहना की और कपड़ों की खरीदारी भी की। सिलाई केन्द्र की प्रमुख श्रीमति कृष्णा दीदी एवं श्रीमति प्रमिला दीदी की मेहनत व मार्गदर्शन में नीलम, रेणु, फ़िजा और दुर्गा आदि कई लड़कियों ने सिलाई का कार्य सीखा और अपने द्वारा बनाये गये कपड़ों की प्रदर्शनी लगायी। पूरा आयोजन बहुत सुन्दर और सराहनीय था।

-सौम्या पाटणकर

हमारी गतिविधियाँ

श्री अरविन्द एजुकेशन सोसाइटी

नई पीढ़ी को श्री अरविन्द एवं श्री माँकी शिक्षा के अनुरूप उच्चतर माध्यात्मिक व सामंजस्यपूर्ण जीवन के लिये तैयार करने के उद्देश्य से श्री अरविन्द एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना वर्ष 1964 में हुई थी। श्री अरविन्द और श्री माँद्वारा प्रतिपादित भौतिक, प्राणिक, मानसिक, चैत्य और आध्यात्मिक – पाँच अंगों वाली सर्वांगीण शिक्षा पद्धति के प्रसार एवं क्रियान्वयन हेतु सोसाइटी सतत् प्रयासरत है।

विगत वर्षों में सोसाइटी ने अनेक शिक्षण संस्थाओं एवं कार्यक्रमों को प्रारम्भ और विकसित किया है।

मातृ अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालय : मातृ अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालय उच्चतर माध्यमिक (10+2) अंग्रेजी माध्यम से एक सह-शिक्षण शिक्षापीठ है जो सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी एजुकेशन से सम्बद्ध है । इसकी स्थापना 1953 में हुई थी और यह मानविकी, विज्ञान एवं वाणिज्य में पाठ्यक्रम संचालित करता है । श्री अरविन्द एवं श्री माँ की शिक्षा पद्धति के अनुरूप विद्यालय का अपना विशिष्ट परिवेश है। यहाँ शरीर, प्राण, मन, चैत्य आदि व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों के सामंजस्यपूर्ण विकास के माध्यम से एक समेकित व्यक्तित्व के निर्माण का प्रयास किया जाता है। विद्यालय में खेल-कूद और शारीरिक विकास के लिये सभी प्रशिक्षण सुविधाएँ हैं। स्पोर्ट्स अथॉरिटि ऑफ इण्डिया द्वारा कुछ खेलों में प्रशिक्षण के लिये इस विद्यालय को अपनाया गया है। यहाँलगभग तीस समाजोपयोगी एवं उत्पादक कार्यों (SUPW) में छात्र भाग लेते हैं - इस हेतु गायन, नृत्य, चित्रकला, इलेक्ट्रॉनिक्स, मोमबत्ती बनाना, चॉक बनाना, काष्ठ शिल्प इत्यादि अनेक सुविधाएँउपलब्ध हैं। शारीरिक विकास के साथ-साथ सांस्कृतिक गतिविधियों पर अधिक बल दिया जाता है। आश्रम का शान्त परिसर विद्यालय के वातावरण पर सुन्दर और अनुकूल प्रभाव डालता है ।

मातृ कला मन्दिर: यह ललित कलाओं का सांध्यकालीन विद्यालय है जो 1967 में प्रारम्भ हुआ था। इसमें ओडिसी, भरतनाट्यम, कत्थक, कुचिपुड़ी नृत्यों, शास्त्रीय तथा सुगम गायकी, सितार, गिटार, की-बोर्ड, वायोलिन, तबला वादन, चित्रकला, ताए क्वोन डो, टेबल टेनिस आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। कक्षाएँ मातृ अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालय के भवन में होती हैं और प्रशिक्षण की अच्छी सुविधायें उपलब्ध हैं। बड़े-बड़े संगीत, नृत्य कला कक्ष हैं तथा संगीत और नृत्य की विभिन्न परम्पराओं के सुयोग्य एवं प्रतिष्ठित शिक्षक हैं। श्री माँ द्वारा दिये गये आदर्श 'सामंजस्य' के अनुरूप मातृ कला मन्दिर में कला के तकनीकी तथा व्यावसायिक पक्ष की अपेक्षा सामंजस्यपरक एवं योगात्मक पक्ष को अधिक महत्व दिया जाता है। यहाँ कला को समग्र जीवन के अविभाज्य अगं के रूप में देखा जाता है, जो स्वयं की खोज तथा स्वयं की अभिवृद्धि का एक सशक्त माध्यम है। सभी कक्षाएँ पाँच वर्ष की आयु से ऊपर के बच्चों तथा वयस्कों के लिये खुली हैं। कार्य अवधि अपरान्ह 3 बजे से सायं 6 बजे तक है तथा प्रत्येक विधा की कक्षाएँ सामान्यतः सप्ताह में दो दिन लगती हैं। जून मास में कक्षाएँ स्थगित रहती हैं। छात्र वर्ष में कभी भी प्रवेश प्राप्त कर सकते हैं। परीक्षाओं के हेतु मातृ कला मन्दिर, गन्धर्व महाविद्यालय से सम्बद्ध है।

मीराम्बिका: समेकित शिक्षा एवं मानवीय मूल्यों के क्षेत्र में शोध हेतु स्थापित यह केन्द्र वर्ष 1980 में प्रारम्भ किया गया था। इसका उद्देश्य समेकित अथवा पूर्ण एवं मुक्त अथवा सहज प्रगति शिक्षा प्रणाली को विकसित करना है। इसकी दो शाखाएँ हैं-

मुक्त / सहज प्रगति विद्यालय: मुक्त/सहज प्रगति शिक्षा के लिये यह एक प्रायोगिक इकाई है। अध्यापक और बच्चे साथ-साथ खेलते और कार्य करते हैं जिससे प्रत्येक बच्चे की मानसिक, रचनात्मक तथा शारीरिक क्षमताओं का सहज विकास होता है। समेकित विकास की इस प्रक्रिया का आधार है चैत्य सत्ता के प्राकट्य के माध्यम से मार्गदर्शन। शिक्षा बच्चों पर केन्द्रित है। औपचारिक कक्षाओं व परीक्षाओं के स्थान पर परियोजना पद्धति का अनुसरण किया जाता है।

विद्यालय के अनुसंधान तथा संसाधन खंड में शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में मानव उद्यम के विभिन्न क्षेत्रों में चेतना के उच्च स्तरों के एकीकरण पर अनुसंधान कार्य किया जाता है । यहाँ समेकित अध्ययन की नई पद्धतियाँ विकसित हो रही हैं और विचारों, प्रविधियों तथा शैक्षिक साधनों का यह एक विनिमय केन्द्र है।

शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान: औपचारिक शिक्षक प्रशिक्षण से मूलतः भिन्न यह संस्थान एक ऐसा परिवेश उपलब्ध कराता है जिससे प्रशिक्षार्थी सचेतन होकर अपने व्यवहार तथा समझ को विकसित कर सकते हैं । यहाँ प्रारंभ से ही सिद्धांत तथा अभ्यास को पूर्णतः समेकित किया जाता है । इसके दो प्रकार के पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं :

(क) **त्रि-वर्षीय नर्सरी अभिनव एवं पूर्णांग शिक्षक प्रशिक्षण:** इस पाठ्यक्रम में हिन्दी, अंग्रेजी तथा गणित अध्यापन, मॉण्टेसरी प्रशिक्षण, कला तथा क्राफ्ट्स, शिशुगीत, नर्सरी खेल तथा अभ्यास, कठपुतली कला, कहानी सुनाना, स्कूल प्रबन्ध तथा योजना, समेकित शिक्षा, आत्म-विकास तथा बाल मनोविज्ञान का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षुता तथा प्रयोगात्मक कार्य इस पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग है। प्रशिक्षार्थी के लिये अंग्रेजी का आधारभूत ज्ञान होना अनिवार्य है ।

(ख) **त्रि-वर्षीय अभिनव एवं पूर्णांग प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम:** प्रशिक्षण माध्यम अंग्रेजी है, अतः प्रशिक्षार्थियों को अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है। पाठ्यक्रम की विषयवस्तु तथा प्रक्रिया दोनों नवीन ही हैं। उद्देश्य है आत्मबोध, आध्यात्मिकता एवं व्यक्तिगत जिज्ञासा का समन्वय तथा सीखने की कला का अध्ययन। प्रशिक्षुता तथा प्रयोगात्मक कार्य पूरे पाठ्यक्रम के आवश्यक अंग हैं। संगोष्ठियों, कार्यशालाओं तथा सामूहिक चर्चाओं के माध्यम से सिद्धान्तों की जानकारी दी जाती है। ऐसी एक परियोजना जिसका निर्णय प्रत्येक प्रशिक्षार्थी स्वयं करता है इस पाठ्यक्रम का एक भाग होती है। अध्ययन नीतियों के अनुरूप ही आजकल प्रक्रिया होती है।

सभागृह: मातृ अंतर्राष्ट्रीय विद्यालय से संलग्न एक आधुनिक सभागृह निर्माणाधीन है। सभागृह के तहखाने में वाहन खड़े करने की व्यवस्था की गयी है । आधार तल में एक बड़ा प्रार्थना कक्ष है एवं प्रथम तल में 1000 व्यक्तियों के बैठने की क्षमता वाला सभागृह है।

श्री अरविन्द व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान: युवा व खेल मंत्रालय के द्वारा प्रायोजित इस संस्थान की स्थापना वर्ष 1989 में आर्थिक रूप से कमजोर बेरोजगार युवाओं को कुछ उपयोगी व्यवसायों में प्रशिक्षित करके जीविकोपार्जन हेतु सक्षम बनाने के लिये हुई थी। संस्थान में अनेक व्यवसायों में 1 मार्च तथा 1 सितम्बर से आरम्भ होने वाली सत्रों में 6 मास का प्रशिक्षण दिया जाता है - (1) भोजन

बनाना (पाक कला), पावरोटी बनाना (बेकरी), और खाद्य प्रसंस्करण, (2) बढ़ईगीरी, फोटो फ्रेमिंग और लेमिनेशन, (3) कम्प्यूटर हिन्दी एवं अंग्रेजी टंकण, (4) हस्तनिर्मित कागज बनाना, कागज़ कला, पुस्तक मढ़ाई एवं स्क्रीन प्रिंटिंग, (5) पुस्तकालय विज्ञान प्रशिक्षण, (6) अर्द्धचिकित्सा प्रशिक्षण, (7) सिलाई । ये प्रारम्भिक स्तर के पाठ्यक्रम हैं जिनमें व्यावहारिक प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है।

सभी प्रकार के प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (सामान्य नियम) :

कृपया अपना पता लिखा टिकट-लगा लिफाफा भेजकर विवरण पुस्तिका (प्रॉस्पेक्टस) के लिये आवेदन करें।

चूंकि प्रशिक्षार्थी आश्रम परिसर में ही रहते हैं अतः उन्हें सदा अनुशासन में रहना होता है। उनसे आशा की जाती है कि वे स्वयं को आश्रम जीवन से जोड़ें। उन्हें व्यायाम, खेलों, श्रमदान, हिन्दी व अंग्रेजी की कक्षाओं तथा सांध्यकालीन ध्यान में भाग लेना होता है। धूम्रपान, मद्यपान, आदि पूर्णतः वर्जित हैं । स्वस्थ तथा उपयोगी गतिविधियों में भागीदारी तथा आश्रम का वातावरण प्रशिक्षार्थियों के व्यक्तित्व का उन्नयन करने तथा उनमें आत्मविश्वास जगाने में सहायक होता है।

पिछड़े क्षेत्रों में सहायता: हम लोगों ने ग्रामों, आदिवासी तथा पिछड़े क्षेत्रों के कुछ विद्यालयों को अपनाया है । इन विद्यालयों को हम समय-समय पर पुस्तकें, कपड़े, आदि देते हैं। उदाहरणार्थ प्रत्येक वर्ष दीपावली के अवसर पर हमारे दिल्ली स्थित विद्यालयों के छात्र अपने पुराने अच्छी दशा वाले वस्त्र गरीब बच्चों में वितरण के लिये देते हैं ।

अन्य क्षेत्रों के शिक्षकों का प्रशिक्षण: देश भर के 250 से अधिक श्री अरविन्द विद्यालयों में अधिकांश को श्री अरविन्द के अनुयायी स्वतंत्र रूप से चला रहे हैं। लगभग 95% विद्यालय आदिवासी क्षेत्रों या पिछड़े इलाकों में हैं। श्री अरविन्द एजुकेशन सोसाइटी के इन विद्यालयों के बहुत से शिक्षकों को हम ना केवल नि:शुल्क भोजन और आवास की सुविधा प्रदान करती है वरन सुपात्र विद्यालयों को आवश्यक वित्तीय सहायता भी दी जाती है ।

जीवन मूल्यों की शिक्षा: श्री अरविन्द एजुकेशन सोसाइटी को मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर 'वैल्यू एजुकेशन' की शिक्षा प्रदान करने के लिये अधिकृत किया गया है। इसके तहत विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये पूरे वर्ष नैनीताल, मधुबन (रामगढ़), केचला, औरोवैली आदि स्थानों में कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है।

संगीत का प्रशिक्षण: गुरू-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत दिल्ली, नैनीताल, मधुबन में गायन एवं विभिन्न वाद्यों के विभिन्न रागों में वादन का प्रशिक्षण दिया जाता है । इस योजना के तहत प्रशिक्षार्थियों को वाद्य यंत्र दिये जाते हैं तथा उनके भोजन व आवास की नि:शुल्क व्यवस्था भी की जाती है।